प्रवाह

77 साल बेमिसाल

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा

एक शासक को दंड देने के प्रति मंद और पुरस्कार प्रदान करने को लेकर तेज होना चाहिए। -ओविड

बार-बार बादल फटने की घटनाएं हिमालय की संरचना, मानसून की प्रकृति और जलवायु परिवर्तन के खतरनाक मेल को रेखांकित करती हैं। अब देहरादून जिले तक पहुंची आपदा एक बार फिर याद दिलाती है कि प्रकृति के साथ खिलवाड़ की भारी कीमत हो सकती है।

फिर सैलाब

हिमाचल, उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, पंजाब समेत देश के विभिन्न राज्यों में प्रकृति का प्रकोप देखने को मिल ही रहा है, लेकिन अब हिमालय की तलहटी में स्थित काफी हद तक मैदानी देहरादून जिले में बादल फटने से मची तबाही हिमालय की संरचना, मानसून की प्रकृति और जलवायु परिवर्तन के खतरनाक मेल को ही रेखांकित करती हैं। देहरादून में अतिवृष्टि से तमसा, कारलीगाड़, टौंस व सहस्रधारा में जलस्तर बढ़ने से आसपास के घरों और दुकानों इत्यादि में एकाएक पानी भर गया। ऋषिकेश की चंद्रभागा नदी भी उफान पर है। प्रशासन ने लोगों से सुरक्षित स्थानों पर रहने और नदियों के किनारे न जाने की अपील की है। प्रधानमंत्री मोदी ने राज्य को हरसंभव मदद देने का आश्वासन दिया है। आपदा प्रबंधन की टीमें सक्रिय रूप से राहत और बचाव कार्य में लगी हैं, लेकिन मौसम की अनिश्चतता ने उनके प्रयासों को जटिल बना दिया है। गौरतलब है कि देहरादून में सितंबर में हुई बारिश बीते कई दशकों का रिकॉर्ड तो तोड़ ही रही है, इस बार पूरे उत्तराखंड में आसमान से आफत बरसाने में मानसून ने कोई कसर नहीं छोड़ी है। दरअसल, हिमालयी क्षेत्र की भौगोलिक बनावट और नाजुक पारिस्थितिकीय तंत्र इस क्षेत्र को प्राकृतिक आपदाओं के प्रति अत्यधिक संवेदनशील बनाते हैं। मानसून के दौरान भारी वर्षा और अनियमित मौसम, जो अब जलवायु परिवर्तन की वजह से 'न्यू नॉर्मल' होता जा रहा है, बादल फटने जैसी घटनाओं को बढ़ावा देता है। बादल फटने की घटनाएं भू-स्खलन और बाढ़ का कारण बनती हैं और साथ ही, स्थानीय समुदायों, बुनियादी ढांचे और आजीविका को भी भारी नुकसान पहुंचाती हैं, जैसा हम देहरादून में देख भी रहे हैं। दरअसल, उत्तराखंड, हिमाचल इत्यादि राज्यों में जो दृश्य दिख रहे हैं, वे एक चेतावनी हैं कि हमारी नीतियां और तैयारियां, दोनों ही इस खतरे के सामने अपर्याप्त हैं। इस वर्ष समय से पहले आए मानसून ने हिमालय से सटे राज्यों के अलावा पंजाब जैसे मैदानी क्षेत्रों और देश की राजधानी समेत आसपास के क्षेत्रों को भी नहीं बख्शा। लिहाजा इन आपदाओं से निपटने के लिए तात्कालिक और दीर्घकालिक उपायों की आवश्यकता है। मौसम पूर्वानुमान और प्रारंभिक चेतावनी प्रणालियों को अधिक मजबूत करने के अतिरिक्त यह देखने की भी जरूरत है कि क्या बादल फटने जैसी घटनाओं की भविष्यवाणी और इसकी जानकारी स्थानीय समुदायों तक समय पर पहुंचाना संभव है। सर्वोच्च न्यायालय ने हाल ही में उचित ही हिमालयी क्षेत्र में निर्माण गतिविधियों पर नजर रखने के इरादे जताए हैं। जब आपदाओं की आवृत्ति इस कदर बढ़ती दिख रही हो, तो स्थानीय समुदायों को आपदा प्रबंधन व पुनर्वास के लिए प्रशिक्षित करना भी जरूरी हो जाता है। ताजा आपदा एक बार फिर यह याद दिलाती है कि प्रकृति के साथ खिलवाड़ की कीमत भारी हो सकती है।

वक्फ कानून, फैसला और कुछ जरूरी सवाल

वक्फ कानून पर पूरी तरह रोक लगाने पर सुप्रीम कोर्ट के इन्कार के बाद अंतिम फैसला आने तक इसके ज्यादातर प्रावधानों पर अमल हो सकता है। फिलहाल मामले के जल्द निपटारे और इसे सालोंसाल की मुकदमेबाजी से बचाने के लिए चीफ जस्टिस द्वारा पांच सदस्यीय संविधान पीठ का गठन बेहतर विकल्प हो सकता है।

विराग गुप्ता
सुप्रीम कोर्ट के वकील

वक्फ कानून पर सर्वोच्च न्यायालय ने पूरी तरह से रोक लगाने पर इन्कार करते हुए जो अंतरिम आदेश जारी किया है, उसके तीन बड़े पहलू हैं। पहला, अंग्रेजों ने साल 1923 में इस बारे में कानून बनाया था। सुप्रीम कोर्ट के जजों ने वक्फ संपत्तियों के कुप्रबंधन के आंकड़ों का सिलसिलेवार अध्ययन करने के बाद कहा कि 100 साल पहले 1923 के कानून में संपत्तियों की जांच-पड़ताल के लिए जो प्रावधान थे, उन्हें अभी क्यों नहीं लागू किया जा सकता?

चरणजीत लाल चौधरी बनाम भारत संघ मामले में 1950 के संविधान पीठ के फैसले के अनुसार, जजों ने कहा कि पूर्व धारणा हमेशा कानून की संवैधानिकता के पक्ष में होती है। चुनौती देने वालों की जिम्मेदारी है कि वे साबित करें कि संसद से पारित कानूनों से मौलिक अधिकारों का स्पष्ट उल्लंघन हुआ है।

दूसरा, सुप्रीम कोर्ट के अनुसार, 1923 के कानून में वक्फ के पंजीकरण की आवश्यकता बताई गई थी। बंगाल के 1934 के कानून के अनुसार, वक्फ संपत्तियों के बेहतर प्रबंधन और भ्रष्टाचार को रोकने के लिए राज्य सरकार की जवाबदेही तय की गई थी। साल 1995 के कानूनी संशोधन में वक्फ संपत्तियों के रजिस्ट्रेशन का प्रावधान था, जिसे 2013 में मनमोहन सरकार ने खत्म कर दिया था। इससे वक्फ बोर्ड को मनमानी के अधिकार मिल गए थे और सिविल अदालतों के क्षेत्राधिकार में कटौती की गई थी। साल 2025 के कानूनी बदलाव से वक्फ संपत्तियों के प्रबंधन में पारदर्शिता और बेहतर प्रबंधन को लाने का प्रयास किया गया है।

तीसरा, यह अंतरिम आदेश है, जो अंतिम सुनवाई में बहस या निर्णय को प्रभावित नहीं करेगा। शुरुआत में यह मामला चीफ जस्टिस संजीव खन्ना के पास सुनवाई के लिए आया, जो रिटायर हो गए। अब चीफ जस्टिस गवई की दो जजों की बेंच ने अंतरिम आदेश जारी किया है, जो नवंबर में रिटायर हो जाएंगे। इन जटिल मामलों में दो जजों के बीच मतभेद की स्थिति बनने पर तीसरे जज के बहुमत से फैसला हो सकता है। इसलिए इस तरह के मामलों की सुनवाई के लिए न्यूनतम तीन जजों की बेंच का गठन होना चाहिए। इस बारे में राज्यों को नियम बनाने हैं। कानून के समर्थन और विरोध में कई राज्य सरकारें अर्जी लगा सकती हैं। नागरिकता कानून, पूजा स्थल उपासना कानून जैसे अनेक मामलों में पिछले कई वर्षों से सर्वोच्च न्यायालय में मुकदमेबाजी हो रही है। ऐसे में वक्फ मामले के निपटारे में भी कई वर्ष लग सकते हैं। लेकिन अंतिम फैसला आने तक अंतरिम आदेश के अनुसार, वक्फ कानून के अधिकांश प्रावधानों पर सिलसिलेवार तरीके से अमल हो सकता है। मामले के जल्द निपटारे और न्यायिक अनुशासन को सुनिश्चित करने के लिए इस मामले की सुनवाई के लिए चीफ जस्टिस द्वारा पांच सदस्यीय संविधान पीठ का गठन बेहतर विकल्प हो सकता है।

वक्फ बिल पर संसद की संयुक्त समिति में लंबी बहस हुई, जहां सरकार ने 14 संशोधन स्वीकार किए थे। कई संशोधन जो स्वीकार नहीं किए, उनके बारे में सुप्रीम कोर्ट में याचिकाएं दायर हुई थीं। याचिकाकर्ताओं के अनुसार, नए कानून से धार्मिक स्वतंत्रता के साथ अनेक मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है। उन सभी दलीलों का सरकार ने जवाब दिया, जिसके बाद जजों ने 128 पेज का भारी भरकम अंतरिम आदेश जारी किया है। कानून के विरोधियों के अनुसार, अन्य धर्मों की संपत्तियों के प्रबंधन में सरकार का हस्तक्षेप नहीं है। ऐसे में, मुस्लिम धर्म से जुड़ी संपत्तियों के वक्फ बोर्ड में गैर-मुस्लिमों की नियुक्ति समानता के साथ धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकारों का उल्लंघन है। केंद्र सरकार ने सुनवाई के दौरान आश्वासन दिया था, जिसके अनुसार, गैर-मुस्लिम सदस्य अधिकतम 2-4 ही रहेंगे। सरकार की बात को लिखित तौर पर शामिल करते हुए अंतरिम आदेश में कहा गया है कि केंद्रीय वक्फ परिषद में अधिकतम चार और राज्य वक्फ बोर्डों में अधिकतम तीन गैर-मुस्लिम सदस्य हो सकते हैं। कोर्ट ने कहा कि जहां तक संभव हो सीईओ मुस्लिम होना चाहिए।

दूसरी आपत्ति के अनुसार, दानदाता को पांच साल से अधिक मुस्लिम होने की शर्त और गैर-मुस्लिमों को वक्फ के माध्यम से दान से वंचित करना भेदभावपूर्ण है। इस बारे में आदेश में कहा गया है कि जब तक राज्य सरकारें यह तय करने के लिए नियम नहीं बनातीं कि कोई व्यक्ति मुस्लिम है या नहीं, तब तक इस कानून पर अमल नहीं होगा। वक्फ का मुद्दा धर्मांतरण से भी जुड़ा है। जबरन और प्रलोभन से धर्मांतरण रोकने के लिए हरियाणा, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तराखंड के कानूनों को चुनौती देने वाली कुछ याचिकाओं को सुप्रीम कोर्ट ने हाईकोर्ट के पास से अपने पास ट्रांसफर करने का आदेश जारी किया है।

तीसरी आपत्ति के अनुसार, वक्फ कानून में कलेक्टर के अधिकारों और सरकारी हस्तक्षेप से वक्फ की जमीन सरकारी दर्ज हो जाएगी। केंद्र सरकार ने सुनवाई के दौरान कहा था कि कलेक्टर केवल प्रारंभिक जांच करता है और अंतिम फैसला ट्रिब्यूनल या कोर्ट का होता है। उसके अनुसार, सर्वोच्च न्यायालय के आदेश में कहा गया है कि कलेक्टर को नागरिकों के संपत्ति अधिकारों पर फैसला करने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

चौथी आपत्ति के अनुसार, पहले मौखिक वक्फ भी मान्य थे। अब रजिस्ट्रेशन की अनिवार्यता और लिमिटेशन कानून लागू होने से वक्फ संपत्तियों पर विवाद और मुकदमेबाजी बढ़ेगी। सरकार के जवाब के अनुसार, इससे पारदर्शिता व जवाबदेही बढ़ने के साथ फर्जी वक्फ रुकेंगे। जजों के अनुसार, यह प्रावधान साल 2013 के पहले के कानून में था, इसलिए इसे फिर से लागू करना गलत नहीं है।

वक्फ को पारदर्शी बनाने की मांग 1969 में संसद में उठी थी। उसके बाद साल 2006 में सच्चर समिति ने प्रबंधन में गैर-मुस्लिमों को शामिल करने और प्रभावी ऑडिट की सिफारिश की। वक्फ बाय यूजर पहलू पर कोर्ट के आदेश में आंध्र प्रदेश की हजारों एकड़ सरकारी जमीन का जिक्र है, जिसे गलत तरीके से वक्फ संपत्ति घोषित कर दिया गया। संपत्तियों के पंजीकरण, बेहतर प्रबंधन और मुकदमेबाजी कम होने से इनका इस्तेमाल मुस्लिम समुदाय के कल्याण के लिए होगा, इसलिए नए कानून को मुस्लिमों के मामले में अनुचित हस्तक्षेप नहीं माना जाना चाहिए। यह कानून राज्यों के सहयोग से ही लागू होगा, इसलिए अदालतों में विवाद के बजाय संघीय स्तर पर बेहतर संवाद होना चाहिए। इस कानून के विरोधियों को यह भी समझने की जरूरत है कि 2013 में तुष्टीकरण के लिए संसद ने जो कानूनी बदलाव किए थे, उन्हें संसद से रद्द करना असांविधानिक कैसे हो सकता है?

edit@amarujala.com

जीवन धारा

रॉबर्ट वाल्डिंगर

'जब हम उन बातों से अभिभूत हो जाते हैं, जो हमारे नियंत्रण से बाहर हों, तो हम खुद को दयनीय बना लेते हैं। इसलिए जिंदगी एक महत्वपूर्ण परियोजना है, यह फर्क समझने की कि क्या हमारे नियंत्रण में है और क्या नहीं।'

इतना तो पता हो कि हम हैं कहां

महान ग्रीक दार्शनिक एपिक्टेटस का कथन है, 'खुशी और आजादी की शुरुआत एक सिद्धांत की स्पष्ट समझ के साथ होती है। कुछ बातें हमारे नियंत्रण में होती हैं और कुछ बातें नियंत्रण से परे।' एपिक्टेटस का जन्म गुलाम के तौर पर हुआ था, इसलिए नियंत्रण का सवाल उनके लिए निजी था। हमें तो उनकी मां द्वारा उन्हें दिया गया नाम तक नहीं पता है। एपिक्टेटस एक ग्रीक शब्द है, जिसका मतलब होता है, 'उपार्जित।' उनके मुताबिक, 'जब हम उन बातों से अभिभूत हो जाते हैं, जो हमारे नियंत्रण से बाहर हों, तो हम खुद को दयनीय बना लेते हैं। इसलिए जिंदगी एक महत्वपूर्ण परियोजना है, यह फर्क समझने की कि क्या हमारे नियंत्रण में है और क्या नहीं।'

धर्मशास्त्री रेनहोल्ड नेबर की 'शांति प्रार्थना' का मूल संस्करण, तो कुछ अलग है, लेकिन उसका भाव आम तौर पर इस प्रकार है, 'भगवान मुझे शांति प्रदान करें कि मैं उस बात को स्वीकार कर सकूं, जिसे मैं बदल नहीं सकता, उस बात को बदलने का हौसला दें, जिसे मैं बदल सकता हूं, और इन दोनों के बीच का अंतर समझने का विवेक दें।' लोग अक्सर सोचते हैं, 'वास्तविक खुशी मेरी पहुंच से बाहर है, क्योंकि इतनी सारी बातें पत्थर की लकीर की तरह जड़ हैं कि मैं उन्हें बदल नहीं सकता। मुझे आनुवंशिक तौर पर काबिलियत हासिल नहीं है, मैं मिलनसार नहीं हूं, मैं विगत जिंदगी में सदमा झेल चुका हूं और मैं अब भी उससे जूझ रहा हूं, मुझे उस तरह की लाभ की स्थिति भी हासिल नहीं है, जैसी कि कुछ लोगों को इस असंतुलित और अन्यायपूर्ण दुनिया में हासिल है।'

जिंदगी के जुए में कई बातें महत्व रखती हैं। हम शायद इसे पसंद नहीं करें, लेकिन कुछ बातें होती हैं, जिनके साथ हमारा जन्म होता है या फिर ऐसे हालात में हमारा जन्म होता है, जो हमारी खुशहाली को प्रभावित करते हैं और साथ ही हमारे तात्कालिक निजी नियंत्रण से बाहर होते हैं। आनुवंशिकता महत्व रखती है, लिंग महत्व रखता है। बुद्धिमत्ता, विकलांगता, लैंगिक रुझान, नस्ल और निश्चित तौर पर हमारे सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों और व्यवहार के कारण इन सब बातों का महत्व होता है। उदाहरण के लिए, अश्वेत अमेरिकी, अमेरिका के न्यूनतम लाभ वाले वर्गों में आते हैं-भले ही सबसे कम लाभ वाला वर्ग नहीं हो। जैसा कि कई अध्ययनों में बताया गया है कि सामाजिक-आर्थिक रुतबे का भावनात्मक सेहत पर असर पड़ सकता है। खैर, हम अपना ध्यान इस बात पर केंद्रित करें कि आप अपने समाज या त्वचा के रंग के बावजूद क्या कर सकते हैं। हम उन लचीले कारकों को चिह्नित करेंगे, जिन्होंने बेहद हताशा भरी अनेक परिस्थितियों में भी एक व्यक्ति की जिंदगी की व्यक्तिगत गुणवत्ता को प्रभावित किया है। कारक जो आपकी जिंदगी को प्रभावित कर सकते हैं और जो आपके नियंत्रण में हैं। कुल मिलाकर बात यह है कि किसी भी जगह पर पहुंचने के लिए शुरुआत करने से पहले आपको यह तो पता होना ही चाहिए कि आप इस वक्त कहां पर हैं। -'द गुड लाइफ' के अनूदित अंश

हर पल को जीना सीखें

सूत्र

कई लोगों से पूछा जाता है कि वे जिंदगी से क्या चाहते हैं, तो वे कहते हैं कि बस 'खुश रहना' चाहते हैं। लेकिन, खुशी का मतलब क्या होता है? यह कैसी दिखेगी? जिंदगी को खुशहाल बनाने के लिए कई अनकहे मिथक हमारे भीतर छिपे हुए हैं। यदि हम हालात कैसे भी हों उनके साथ तालमेल बिठाकर हर पल को जीना सीख जाएं, तो समझो खुशी का भंडार मिल गया।

दूसरा पहलू

मथुरा के वंशीवट को लेकर मान्यता है कि भगवान श्रीकृष्ण और उनके बाल सखाओं का संगीत अब भी पेड़ों में गुंजायमान है।

वंशीवट की ध्वनि का रहस्य

अमित मुद्गल

राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान लखनऊ के निदेशक डॉ. अजीत कहते हैं कि वह इस आवाज का अध्ययन करना चाहते हैं।

जयराम दास महाराज बताते हैं कि रुड़की से इंजीनियरों की टीम ने आकर अपने यंत्रों के साथ इस बरगद का अध्ययन किया था। टीम ने माना कि कोई आवाज तो है, लेकिन कारण पता नहीं लगा पाई।

महान वैज्ञानिक जगदीश चंद्र बसु ने 10 मई, 1901 को साबित किया कि पेड़-पौधे भी इन्सानों की तरह ही जीवित हैं और सांस लेते हैं। अमेरिकी कवि हेनरी वड्सवर्थ लॉन्गफेलो ने अपनी पुस्तक *डे ऑफ सनशाइन* में ध्वनि के मर्म को छुआ। कई कवियों, साहित्यकारों और वैज्ञानिकों ने पेड़ों के महत्व पर अनेक बातें कही हैं, लेकिन कान्हा की नगरी मथुरा के पेड़ अलग ही रहस्य की चादर ओढ़े हुए हैं। मथुरा में वंशीवट के नाम से दो स्थान विख्यात हैं। यमुना के दोनों तरफ। एक वृंदावन में, तो दूसरा तहसील मांट मुख्यालय से चंद दूरी पर स्थित। मान्यता है कि भगवान श्रीकृष्ण गायें चराते वक्त वंशीवट पर ग्वालबालों के संग बांसुरी, वीणा आदि बजाते थे। सूरदास भी लिखते हैं.... *मैया मोरी मैं नहिं माखन खायो। चार पहर बंसीबट भटक्यो, सांझ परे घर आयो।*

मान्यता है कि भगवान श्रीकृष्ण के संगीत की ध्वनियां यहां इतनी रम गई हैं कि बरगद के भीतर आज भी वह संगीत बज रहा है। मांट के वंशीवट पर आने वाले श्रद्धालु बरगद से कान सटाकर ध्वनि सुनने का प्रयास करते हैं। कुछ कहते हैं, 'ढोल कहो या मृदंग' कुछ आवाज तो है। वंशीवट पीठाधीश्वर जयराम दास महाराज कहते हैं कि वास्तव में भगवान श्रीकृष्ण व बाल सखाओं का संगीत अब भी वंशीवट में गुंजायमान है। राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के निदेशक डॉ. अजीत कुमार शासनी कहते हैं कि कई बार पेड़ों में पानी होने के कारण सरसराहट की आवाज आ सकती है, लेकिन ढोल या मृदंग जैसी आवाज पर अध्ययन किया जाना जरूरी है। वह खुद यहां शोध करना चाहते हैं। जयराम दास महाराज बताते हैं कि रुड़की से इंजीनियरों की टीम ने आकर अपने यंत्रों के साथ इस बरगद का अध्ययन किया था। टीम ने माना कि कोई आवाज तो है, लेकिन कारण पता नहीं लगा पाई।

ब्रज चौरासी परिक्रमा के इस क्षेत्र के विकास पर अब ब्रज तीर्थ विकास परिषद भी काम कर रही है। वृंदावन वंशीवट के सेवायत श्रीगोविंद शरण कहते हैं कि यह ऐसा स्थान है, जहां भगवान श्रीकृष्ण महारास रचाते थे और उसे देखने के लिए ही स्वयं भगवान शंकर गोपी का रूप धारण कर आए। वृंदावन शोध संस्थान के शोध अधिकारी डॉ. राजेश शर्मा कहते हैं कि किंवदंती यह भी है कि ये दोनों ही वट द्वापर युग में एक-दूसरे से मिले हुए थे। यमुना पार कर इस वट पर भगवान कृष्ण इस पार और उस पार जाते रहे। बाद में दोनों का स्वरूप अलग-अलग हो गया। हालांकि, वंशीवट में आज भी कई तथ्य ऐसे हैं, जो यहां के लोगों की बातों को ज्यादा पुष्ट करते हैं।

आंकड़े

ईवी चार्जिंग स्टेशन

इलेक्ट्रॉनिक व्हीकल्स (ईवी) की बढ़ती मांग के साथ ही देश के विभिन्न राज्यों में सार्वजनिक ईवी स्टेशन की संख्या भी बढ़ रही है।

कर्नाटक	5,765
महाराष्ट्र	3,728
उत्तर प्रदेश	1,989
एनसीटी दिल्ली	1,941
तमिलनाडु	1,413

आंकड़े राज्यों में सार्वजनिक ईवी चार्जिंग स्टेशनों की संख्या के | स्रोत : RBI, BEE

महेंद्र मुनि ने पाखंडियों से कहा, 'अपने जीवन और पवित्र आश्रम को नष्ट मत करो।' उनकी बात का इतना असर हुआ कि वे पाखंड छोड़कर भगवान की भक्ति में लग गए।

पेट-पूजा में जीवन को नष्ट न करो

अंतर्यात्रा
संकलित

महेंद्र मुनि को कई सिद्धियां प्राप्त हो गई थीं, लेकिन वह इससे ही संतुष्ट नहीं हुए। वह भास्कर योगी की शरण में पहुंचे और दीक्षा ग्रहण की। गुरु कृपा और साधना से उन्हें पूर्ण बोध की प्राप्ति हो गई। इसके बाद महेंद्र मुनि लोगों के दुखों को दूर करने और उन्हें सन्मार्ग पर लाने के लिए विचरण करने लगे।

एक बार उन्होंने देखा कि कुछ लोग संन्यासी का भेष धारण किए हुए हैं, लेकिन उनके अंदर संन्यासी जैसे कोई लक्षण नहीं थे। कोरा दिखावा और पाखंड ज्यादा कर रहे थे। उन्होंने उन लोगों को सीख देने के लिए कहा, 'क्या संन्यास का उद्देश्य चार्वाकपंथियों की भांति इस जीवन को आराम से दुनिया की मौज लूटने में बिताना ही है? यदि ज्ञान हुआ, तो क्या आश्रमधर्म के विरुद्ध पाखंड को प्रश्रय दिया जा सकता है? यदि ज्ञान नहीं हुआ, तो उसके लिए निरंतर प्रयत्नशील रहकर गुरुसेवा, जप, नित्यकर्म आदि के द्वारा अंतःकरण शुद्ध करके ज्ञान का अधिकारी बनना चाहिए या यों महात्मा घोषित करके लोगों में पुजना चाहिए। यों पेट-पूजा में लगकर अपने जीवन और पवित्र आश्रम को नष्ट मत करो।' सच्चे संत की बात उन आडंबरधारी संन्यासियों के सीधे हृदय में चुभ गई और उन्हें अपनी भूल का भान हुआ। उन्होंने महेंद्र मुनि से क्षमा-याचना कर कहा, 'प्रभु! आपने हमारे ज्ञान के चक्षु खोल दिए, कृपया कर अपने शरणागत कर लें।' इसके बाद उन्होंने सभी को ज्ञान-विज्ञान का उपदेश देकर भक्ति मार्ग पर चलाया।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 17 सितंबर, 1949

हिंदी राष्ट्रभाषा स्वीकृत, लिपि व अंक देवनागरी माने गए

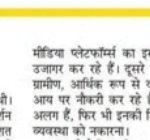

हिंदी राष्ट्रभाषा स्वीकृत
लिपि व अंक देवनागरी माने गये
चीनी के तोड़ का दोष
कश्मीर के मामले पर

विधानसभा ने भारत की राष्ट्रभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी स्वीकार कर ली। भारी बहस के बाद मुंशी आयंगर फॉर्मूले को कुछ संशोधनों के साथ स्वीकार किया गया। वहीं 15 साल तक केंद्र सरकार के सारे काम अंग्रेजी में होंगे।

जब पूरी व्यवस्था ही विफल हो जाती है

नेपाल में जो कुछ हुआ, वह आर्थिक असमानता, सीमित अवसरों और प्रतिभाशाली युवाओं को बनाए रखने में व्यवस्थागत विफलता का नतीजा है।

पत्रलेखा चटर्जी, वरिष्ठ पत्रकार | मुद्दा

दक्षिण एशिया के युवा अब अपनी बात कहने के लिए लंबा इंतजार नहीं कर रहे हैं। काठमांडो में युवा प्रदर्शनकारियों ने बड़े स्तर पर उग्र प्रदर्शन किए। कुछ ने नेपाल की संसद, पुलिस थानों और राजनेताओं के घरों को आग के हवाले कर दिया। पिछले साल ढाका में छात्रों ने राजनीतिक वंश को उखाड़ फेंकने में योगदान दिया। अर्थव्यवस्था के ध्वस्त होने और भ्रष्टाचार की वजह से वर्ष 2022 में श्रीलंका के युवाओं की अगुवाई में चले अरागालया आंदोलन ने राष्ट्रपति गोतबाया राजपक्षे की सरकार को गिरा दिया।

राजनीतिक उथल-पुथल के लिए नेपाल कोई अजनबी जगह नहीं है, लेकिन नेपाल के जेन-जी विरोध ने उजागर कर दिया कि लंबे समय तक अभिजात वर्ग द्वारा की जाने वाली उपेक्षा के कारण युवाओं की दबी हुई हताशा किस तरह अप्रत्याशित रूप से फट पड़ती है। वर्ष 1997 से 2012 के बीच पैदा हुई पीढ़ी, जिसे जेन-जी कहते हैं, डिजिटल कुशलता और आर्थिक अनिश्चितता से प्रभावित एक हाइपरकनेक्टेड दुनिया में पली-बढ़ी है। विद्रोह का तात्कालिक कारण सरकार द्वारा 26 सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स पर प्रतिबंध माना जा रहा है, लेकिन व्यापक रूप से इसे असहमति को दबाने के रूप में देखा जा रहा है। लेकिन, इसका गहरा कारण व्यवस्थागत विफलता है। नेपाल के युवाओं ने सिर्फ सेंसरशिप का ही विरोध नहीं किया, बल्कि उन्होंने विरासत में मिले विशेषाधिकार और दंडमुक्ति पर आधारित राजनीतिक व्यवस्था को भी नकार दिया।

भ्रष्टाचार के खिलाफ बड़े स्तर पर नाराजगी थी। डिजिटल अधिकारों को लेकर शुरू हुआ प्रदर्शन पीढ़ीगत विद्रोह में बदल गया। नेपाल से प्रकाशित अंग्रेजी के अखबार द *अन्नपूर्णा एक्सप्रेस* ने फरवरी 2025 को लिखा था, 'नेपाल चिंताजनक प्रवृत्ति देख रहा है-देश की रीढ़ कहे जाने वाले इसके युवा बेहतर अवसरों की तलाश में बड़ी संख्या में विदेश जा रहे हैं। यह सामूहिक पलायन सिर्फ प्रवास की कहानी नहीं है; यह आर्थिक असमानता, सीमित अवसरों और प्रतिभाशाली युवाओं को बनाए रखने में व्यवस्थागत विफलता का परिणाम है।' लेख में लिखा था, 'यद्यपि बीते कुछ दशकों में प्रतिव्यक्ति औसत आय 7,690 से बढ़कर 1,36,707 रुपये हो गई है, लेकिन यह वृद्धि बेहद असमान है। बीस फीसदी सबसे अमीरों की प्रति व्यक्ति औसत आय 19,325 से बढ़कर 2,59,867 रुपये पहुंच गई, जबकि बीस फीसदी सबसे गरीबों की औसत आय बढ़कर 2,020 से 61,335 रुपये ही हुई। यह भारी असमानता बढ़ती बेरोजगारी और युवाओं के बड़े पैमाने पर पलायन का प्रमुख कारण है।'

बीस लाख से अधिक नेपाली युवा विदेश में काम करते हैं। वित्त वर्ष 2024-25 में नेपाल के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में विदेश से भेजे गए धन (रेमिटेंस) का 32.9 फीसदी योगदान था। नेपाल के युवा व्यापक रूप से दो समूहों में बंटे हैं। एक संघर्षशील युवा-जो शहरी, शिक्षित और डिजिटल रूप से कुशल हैं तथा इंस्टाग्राम, टिकटॉक जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स का इस्तेमाल कर भ्रष्टाचार को उजागर कर रहे हैं। दूसरे पलायन करने वाले युवा-ग्रामीण, आर्थिक रूप से वंचित और विदेश में कम आय पर नौकरी कर रहे हैं। यद्यपि ये दोनों अलग-अलग हैं, फिर भी इनकी शिकायत एक है : टूटी हुई व्यवस्था को नकारना।

यह सही है कि कई बार 'छात्रों की अगुवाई' में होने वाले विरोध-प्रदर्शनों का नेतृत्व वास्तव में छात्र नहीं करते, बल्कि इस आड़ में अराजक तत्व घुसकर पूरे आंदोलन को हथिया लेते हैं, लेकिन नेपाल के मामले में असल मुद्दा कुछ और ही दिख रहा है। वैश्विक युवा डिजिटल रूप से कुशल और हाइपरकनेक्टेड है और यह एक उभरता हुआ वैश्विक युवा इकोसिस्टम भी है। जब असमानता बढ़ती है और एक फीसदी लोग अपने विशेषाधिकारों का दिखावा करते हैं, तब सब्र का बांध टूट जाता है और बस एक खटका दबाने की जरूरत होती है। यह हम एक के बाद दूसरे देश में देख रहे हैं।

गहराती असमानताओं को नजरअंदाज करना और युवा आलोचकों को ब्रेनवॉश बताकर खारिज करना खतरनाक होता है। सभी देशों को इन चेतावनी भरे संकेतों पर गंभीरता से ध्यान देना चाहिए। नेपाल का संकट सिर्फ काठमांडो का संकट न होकर असमानता और विशेषाधिकार के साथ साझा क्षेत्रीय संघर्षों का है। यह उन विकल्पों के बारे में है, जिन्हें हम चुनते हैं-नीति में, व्यवसाय में और एकजुटता में। नई दिल्ली को अब सभी हितधारकों के समक्ष यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि उसकी मित्रता सबसे पहले और खासकर नेपाल के लोगों के साथ है, न कि किसी विशिष्ट राजनीतिक समूह के साथ।

70 प्रतिशत आबादी लगभग भारतीय मूल की है मारीशस की, जिनमें से अधिकांश लोग भोजपुरी, हिंदी और तमिल भाषाओं से जुड़ाव रखते हैं।

शिशिर शुक्ला
शिक्षक, स्वामी शुकदेवानंद महाविद्यालय, शाहजहांपुर

आजकल

भारत-मारीशस संबंधों में जुड़ते नए अध्याय

बीते दिनों वाराणसी में मारीशस के प्रधानमंत्री डा. नवीन चंद्र रामगुलाम एवं भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के बीच विभिन्न मुद्दों को लेकर द्विपक्षीय वार्ता हुई। इस दौरान शिक्षा, अनुसंधान, अंतरिक्ष, समुद्री सुरक्षा आदि महत्वपूर्ण क्षेत्रों में भारत और मारीशस के मध्य कुल सात समझौते हुए, जो निश्चित रूप से दोनों राष्ट्रों के समग्र विकास एवं आर्थिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों की उन्नति के लिए अनुकूलता को सुनिश्चित करेंगे। बेशक ये समझौते भारत एवं मारीशस के संबंधों को एक नई दिशा एवं प्रगति के नए आयाम प्रदान करेंगे

मारीशस भारत का एक प्रमुख व्यापारिक साझेदार ही नहीं, अपितु भारत में एफडीआइ का एक प्रमुख माध्यम भी है। फाइल

हाल में वाराणसी में मारीशस के प्रधानमंत्री डा. नवीन चंद्र रामगुलाम एवं भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के बीच द्विपक्षीय वार्ता हुई। इस दौरान दोनों देशों में विकास के अनेक उभरते हुए क्षेत्रों से संबंधित विभिन्न परियोजनाओं को लेकर परस्पर समझौते भी हुए। शिक्षा, अनुसंधान, अंतरिक्ष, समुद्री सुरक्षा आदि महत्वपूर्ण क्षेत्रों में भारत और मारीशस में कुल सात समझौते हुए, जो निश्चित रूप से दोनों राष्ट्रों के समग्र विकास एवं आर्थिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों की उन्नति के लिए अनुकूलता को सुनिश्चित करेंगे। बेशक ये समझौते भारत एवं मारीशस के संबंधों को एक नई दिशा एवं प्रगति के नए आयाम प्रदान करेंगे। गौरतलब है कि आज के अस्थिर एवं तेजी से बदलते हुए वैश्विक परिदृश्य से विश्व का छोटा एवं बड़ा प्रत्येक राष्ट्र प्रभावित हो रहा है। विशेष रूप से अमेरिका की आर्थिक नीतियों ने जिस स्तर की हलचल एवं अस्थिरता पूरे विश्व में पैदा कर दी है, उसको देखते हुए विश्व के अनेक देशों ने अपने आप को एक सुरक्षा कवच पहनाने की कवायद शुरू कर दी है। भारत की यह विशेषता है कि हमारे इतिहास एवं परंपरा में जहां एक ओर वसुधैव कुटुंबकम् की भावना अंतर्निहित है, वहीं हमारी संस्कृति की एक विशेषता यह भी है कि हमने अन्याय एवं अराजकता के आगे झुकना कभी नहीं सीखा। सिंगापुर, जापान, चीन, मारीशस एवं तमाम अन्य देशों के साथ विभिन्न विषयों को लेकर द्विपक्षीय वार्ता एवं समझौते कहीं न कहीं भारत की दूरदर्शितापूर्ण विदेश नीति का ही एक हिस्सा हैं। इनके पीछे कहीं न कहीं यह संदेश भी निहित है कि भारत अमेरिका की अस्थिर टैरिफ नीतियों के आगे झुकने के लिए कदापि विवश नहीं है।

भारत और मारीशस के संबंध केवल कूटनीति या व्यापारिक हितों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि ये रिश्ते सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और भावनात्मक गहराइयों से भी जुड़े हुए हैं। हिंद महासागर में स्थित छोटा-सा द्वीपीय राष्ट्र मारीशस भारत से हजारों किलोमीटर दूर है, किंतु दोनों देशों के बीच की दूरी भावनाओं, संस्कृति और साझा इतिहास ने मिटा दी है। 19वीं शताब्दी में जब भारतीय श्रमिक 'गिरमिटिया मजदूर' बनकर मारीशस पहुंचे, तब शायद ही किसी ने सोचा होगा कि आने वाले समय में यही भारतीय मूल के लोग वहां की पहचान और राजनीति का अभिन्न हिस्सा बन जाएंगे। आज भारत-मारीशस संबंध केवल प्रवासी भारतीयों की साझी विरासत तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इन संबंधों ने राजनीति, अर्थव्यवस्था, शिक्षा, रक्षा, समुद्री सुरक्षा, विज्ञान-प्रौद्योगिकी और वैश्विक कूटनीति जैसे क्षेत्रों में भी नए आयाम प्राप्त किए हैं। द्विपक्षीय वार्ता के दौरान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने कहा कि खुला, सुरक्षित, स्थिर एवं समृद्ध हिंद महासागर भारत एवं मारीशस की साझा प्राथमिकता है। भारत द्वारा ऊर्जा, विज्ञान एवं तकनीक, शिक्षा एवं स्वास्थ्य, अंतरिक्ष में अनुसंधान एवं अवसंरचना विकास के क्षेत्र में मारीशस को मदद के तौर पर एक विशेष आर्थिक पैकेज प्रदान किया जाएगा। वर्तमान वित्तीय वर्ष में भारत सरकार द्वारा मारीशस को 2.5 करोड़ डालर की सहायता भी दी जाएगी। इसके अतिरिक्त 17.5 मेगावाट के फ्लोटिंग सोलर पावर प्लांट के निर्माण में भी भारत द्वारा मारीशस का सहयोग किया जाएगा। उन्होंने मारीशस को भारत की पड़ोसी प्रथम एवं विजन महासागर नीति का प्रमुख स्तंभ बताया।

शिक्षा, चिकित्सा, विज्ञान एवं तकनीकी एवं मानव संसाधन विकास-ये सभी ऐसे मुद्दे हैं, जो किसी भी देश के विकास एवं प्रगति की आधारशिला को निर्मित करते हैं। भारत के बाहर पहला जन औषधि केंद्र मारीशस में खोला गया है। गत वर्ष मारीशस में यूपीआइ एवं रुपे कार्ड की भी शुरुआत हुई थी। निश्चित रूप से यह कदम भारत एवं मारीशस के मध्य आर्थिक गतिविधियों को विकास के नए आयाम प्रदान करेगा। ऊर्जा को लेकर यदि बात करें तो भारत द्वारा मारीशस को 100 इलेक्ट्रिक बसें दी गई हैं। विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान यानी आइआइटी-मद्रास तथा इंडियन इंस्टीट्यूट आफ प्लांटेशन मैनेजमेंट द्वारा यूनिवर्सिटी आफ मारीशस के साथ शिक्षा, शोध एवं नवाचार को लेकर समझौते किए गए हैं। इन दिनों मारीशस के तकरीबन 5000 से अधिक नागरिक भारत में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं, जो निश्चित रूप से दोनों देशों के मध्य मानव संसाधन विकास को एक नई गति प्रदान करेगा।

इसके अतिरिक्त चागोस मरीन प्रोटेक्टेड एरिया, एसएसआर इंटरनेशनल एयरपोर्ट, हाईवे एवं रिंग रोड के विस्तार, आयुष सेंटर आफ एक्सीलेंस आदि अनेक ऐसे मुद्दे हैं, जिनको लेकर दोनों देश के मध्य सहमति पर हस्ताक्षर हुए हैं। उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी विगत मार्च में मारीशस की यात्रा पर गए थे। इस दौरान दोनों देशों ने व्यापार, समुद्री सुरक्षा एवं रक्षा से संबंधित अनेक मुद्दों पर हस्ताक्षर किए थे। तब वहां के 500 सिविल सेवकों को भी भारत में प्रशिक्षण देने का निर्णय लिया गया था, जिसके अंतर्गत पहला बैच मसूरी में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहा है।

भारत-मारीशस संबंधों की नींव उस दौर में पड़ी थी, जब औपनिवेशिक शक्तियों ने एशिया और अफ्रीका के विभिन्न हिस्सों में श्रमिकों को ले जाकर बसाया। 1834 में गिरमिटिया मजदूरों के रूप में उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड और तमिलनाडु के हजारों लोग मारीशस पहुंचे। वहां उन्होंने कठिन परिश्रम से न केवल अपनी आजीविका चलाई, बल्कि मारीशस की सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना को भी गहराई से प्रभावित किया। धीरे-धीरे भारतीय मूल के लोग मारीशस की राजनीति और प्रशासन में भी सक्रिय हुए। वहां स्वतंत्रता आंदोलन में भी भारतीय मूल के नेताओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही। संस्कृति एवं भाषा को लेकर भारत-मारीशस का गहरा जुड़ाव है। मारीशस की करीब 70 प्रतिशत आबादी भारतीय मूल की है, जिनमें से अधिकांश लोग भोजपुरी, हिंदी और तमिल भाषाओं से जुड़ाव रखते हैं। भारतीय उच्चायोग के सहयोग से मारीशस में हिंदी शिक्षा को बढ़ावा दिया गया है। वहां हर साल 'विश्व हिंदी सम्मेलन' का आयोजन भी होता है, जिसने हिंदी को वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठा दिलाने में योगदान दिया है। भारत और मारीशस के मध्य समुद्र विज्ञान के क्षेत्र में हाइड्रोग्राफी समझौते का नवीनीकरण किया गया एवं साथ ही यह निर्णय भी लिया गया है कि मारीशस में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी निदेशालय स्थापित किया जाएगा। इसके अतिरिक्त अंतरिक्ष अनुसंधान एवं उपग्रह प्रक्षेपण को लेकर भी दोनों देशों के मध्य करार हुआ है।

मारीशस के लिए घोषित किया गया 68 करोड़ डालर का विशेष आर्थिक पैकेज निश्चित रूप से मारीशस के बुनियादी ढांचे, स्वास्थ्य एवं शिक्षा को मजबूत करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। उल्लेखनीय है कि मारीशस एवं भारत के मध्य संबंध केवल और केवल ऐतिहासिक अथवा भौगोलिक पृष्ठभूमि पर ही आधारित नहीं हैं, अपितु समावेशी दृष्टिकोण, साझा मूल्य एवं एक समग्र आर्थिक एवं वैश्विक नीति भी दोनों देशों के संबंधों को रेखांकित करने में एक अहम भूमिका का निर्वहन करती है।

भारत की सागर नीति का अहम हिस्सा है मारीशस

अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत-मारीशस एक-दूसरे का पुरजोर समर्थन करते हैं। इसी की देन है कि मारीशस भारत का एक प्रमुख व्यापारिक साझेदार ही नहीं, बल्कि भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का एक महत्वपूर्ण स्रोत भी बन गया है। इस प्रकार देखें दोनों देशों की अर्थव्यवस्थाओं के विकास के लिए इनके बीच द्विपक्षीय संबंध अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाते हैं। मारीशस की विशेष समुद्री स्थिति के कारण भारत की समुद्री सुरक्षा के दृष्टिकोण से भी ये संबंध अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। यही कारण है कि भारत 'क्षेत्र में सभी के लिए सुरक्षा एवं विकास' (सागर) नीति के तहत मारीशस को एक प्रमुख भागीदार के रूप में देखता है। भारत और मारीशस मिलकर डिजिटल सेवाओं के विकास, ई-प्रशासन, जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों के समाधान, आपदा प्रबंधन और ऊर्जा सुरक्षा जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर लंबे समय से कार्य कर रहे हैं। दोनों देशों के संबंधों की नींव संस्कृति, इतिहास और साझा मूल्यों पर आधारित है। आज जब वैश्विक परिदृश्य बहुध्रुवीयता की ओर बढ़ रहा है, तब भारत-मारीशस संबंध और भी महत्वपूर्ण हो जाते हैं। ये संबंध न केवल द्विपक्षीय सहयोग का उदाहरण हैं, बल्कि हिंद महासागर क्षेत्र में स्थिरता, विकास और साझी सुरक्षा का आधार भी हैं।

निश्चित रूप से आने वाले दिनों में भारत और मारीशस वैश्विक स्तर पर संबंधों की एक नई मिसाल कायम करते हुए एक-दूसरे की आर्थिक प्रगति में सहायक सिद्ध होंगे। तेजी से बहुध्रुवीय रूप ग्रहण करते वैश्विक परिदृश्य में आज प्रत्येक देश के लिए आर्थिक, सामरिक और कूटनीतिक व्यवस्था को उन्नत करना एक गंभीर चुनौती बन चुकी है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह बदलता हुआ वैश्विक परिदृश्य अधिक चुनौतियों से भरा है। हिंद महासागर आज वैश्विक प्रतिस्पर्धा का केंद्र बन चुका है, क्योंकि इससे ऊर्जा और व्यापार का बड़े पैमाने पर आदान-प्रदान होता है। वैश्विक स्तर पर राजनीतिक, आर्थिक और कूटनीतिक संतुलन के लिए मारीशस के साथ भारत के संबंध अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाते हैं, क्योंकि मारीशस वैश्विक दक्षिण और भारत के बीच एक प्रवेश द्वार का कार्य करता है।

यदि आने वाले दशकों में दोनों देशों के संबंधों को नए आयाम प्राप्त होते हैं, तो निश्चित रूप से दोनों देश एक स्थिर, संतुलित और समृद्ध वैश्विक व्यवस्था के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देने में सक्षम होंगे। भारत-मारीशस संबंध केवल दो देशों की साझेदारी नहीं है, बल्कि यह वैश्विक स्थिरता, समुद्री सुरक्षा, जलवायु संकट, ऊर्जा सुरक्षा और सांस्कृतिक आदान-प्रदान की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम भी है।

-शिशिर शुक्ला

खरी-खरी

अर्थ-विश्लेषण का दौर

डा. प्रदीप मिश्र

खेल के मौसम में नन्हें गुरु खेल विश्लेषक बन जाते हैं। चुनावों में राजनीतिक विश्लेषक में तब्दील हो जाते हैं। युद्ध के दौरान वे रक्षा विशेषज्ञ बन गए थे। टैरिफ की वजह से इन दिनों अर्थ-विश्लेषण का दौर चल पड़ा है, इसलिए संप्रति वे अर्थ-विश्लेषक हैं। टीवी पर गंभीरता ओढ़कर कहते हैं, 'अर्थशास्त्र मुद्रा का खेल होता है। बाहर और अंदर के कई अंग्रेजीदां मुद्रा को मुर्दा समझ लेते हैं। वे अंग्रेजीदां हैं, इसलिए कुछ भी समझ सकते हैं। बाहर वाले आर्थिक फायदे के लिए मुद्रा को मुर्दा मानते हैं, जबकि अंदर वाले ऐसा कहकर सत्ता को अपनी तरफ आकर्षित करते हैं।'

नन्हें आगे बोलते हैं, 'एक होती है मांग की लोच। लोच की तुकबंदी, मोच से और चोट से बनती है। मांग पूरी करने का जिम्मा बाजार पर होता है। बाजार को उछल-कूद का शौक होता है। वह कभी उछलता है, कभी औंधे मुंह गिरता है। इसमें कुछ, तेजड़िए होते हैं। कुछ मंदड़िए होते हैं। कुछ कंजड़िए और सुखड़िए होते हैं। वैसे ज्यादातर दुखड़िए और निचुड़िए ही होते हैं। डालर बाजार में चलने वाले रुपये को उठा-उठाके पटकता है, जिससे वह लहूलुहान हो जाता है। लेकिन फिर भी चलता है। रुपये की चोट सरकार को हल्की और विपक्ष को गंभीर लगती है।'

दूसरे चैनल में नन्हें ने कहा, 'इन दिनों जीएसटी नामक एक शब्द बाजार की सभी दिशाओं में गुंजायमान है। यह कारोबारी कम, राजनीतिक ज्यादा लगता है। सरकार इसे कम करके बाजार में हलचल मचा देती है। विपक्ष कहता है, जीएसटी में कमी सरकार की चुनावी माया है। इसीलिए इसे घटाया है, लेकिन जीतेगा विपक्ष, क्योंकि सरकार पर हार का साया है। वैसे अर्थव्यवस्था का अनर्थ करने के लिए टैरिफ नाम का एकदम नया शाहकार आया है। टैरिफ से मचाई है जिसने हड़कंप, उसका नाम है ट्रंप। टैरिफ कितना करेगा नुकसान? सरकार नुकसान को मानती है दाल में नमक के समान, जबकि विपक्ष के मुताबिक यह है पूरी दाल।' नन्हें सरीखे अर्थ-विश्लेषक शब्दों के इन्हीं अर्थों के बीच अर्थ-विवेचन करते हैं। और हम, बस सुनते और भोगते भी हैं। जरूरत व्याख्या की नहीं, व्यवस्था की है शायद?

X पोस्ट

पाकिस्तान में जैश का कमांडर इलियास खुले मंच से यह स्वीकार कर रहा है कि आपरेशन सिंदूर में मसूद अजहर का पूरा परिवार निपट गया। आपरेशन सिंदूर की सफलता के सुबूत सीधे पाकिस्तान से आने लगे हैं। मोनिका वर्मा@TrulyMonica

आइसीसी ने 1970 में दक्षिण अफ्रीका पर प्रतिबंध लगाया था। दक्षिण अफ्रीका में जब तक नस्लभेदी सरकार रही और रंगभेद समाप्त नहीं हुआ, तब तक किसी देश ने उसके साथ क्रिकेट नहीं खेला। ऐसे में आइसीसी के लिए सबसे बड़ा कमाऊ बोर्ड बीसीसीआइ आतंकी देश पाकिस्तान पर प्रतिबंध क्यों नहीं लगवा पा रहा है?
अजय बग्गा@Ajay_Bagga

मैच रेफरी पर कार्रवाई की पीसीबी की मांग को आइसीसी ने ठुकरा दिया है। यह पाकिस्तान के गाल पर एक और तमाचा है। पाकिस्तान ने कहा था कि यह मांग न माने जाने पर वह एशिया कप के शेष मैचों से हट जाएगा तो क्या वास्तव में ऐसा करेगा? मुझे लगता है कि पाकिस्तान आत्मसम्मान से अधिक पैसों को महत्व देगा और बचे हुए मैच खेलेगा।
गौरव सी. सावंत@gauravcsawant

अनुराग अग्रवाल
राज्य ब्यूरो प्रमुख, हरियाणा

हरियाणा डायरी

पंजाब की आपदा में भाईचारा निभाता हरियाणा

मुख्यमंत्री नायब सिंह सैनी पंजाब के लिए राहत सामग्री रवाना करते हुए। फाइल

संकट के समय ही अपने और पराए की पहचान होती है। देश के विभिन्न हिस्सों में आई प्राकृतिक आपदा के चलते हरियाणा के लोगों ने जिस तरह पंजाब के बाढ़ प्रभावित लोगों की मदद की, वह न केवल सराहनीय है, बल्कि पूरे देश के सामने भाईचारे की मिसाल बन गई है। हरियाणा में इस बार औसत से करीब 46 प्रतिशत अधिक बरसात हुई। पहाड़ों से बाढ़ के रूप में रिस-रिसकर आए पानी ने राज्य के करीब साढ़े पांच हजार गांवों को प्रभावित किया। सैकड़ों मकान क्षतिग्रस्त हो गए। पांच लाख किसानों ने 30 लाख एकड़ फसल बर्बाद होने की सूचना राज्य सरकार के पास दर्ज कराई है। खेत अभी इस लायक नहीं हैं कि अगली फसल बोई जा सके। संकट की इस घड़ी में हरियाणा के लोगों ने स्वयं को तो संभाला ही, साथ ही बड़े भाई के रूप में पड़ोसी राज्य पंजाब के लोगों को भी सहारा देने का काम किया है। हरियाणा की इस पूरी कवायद को पंजाब में होने वाले विधानसभा चुनाव की तैयारी से भी जोड़कर देखा जा रहा है।

पंजाब सरकार ने बाढ़ राहत पैकेज हासिल करने के लिए केंद्र के समक्ष जो दावा किया है, उसके मुताबिक वहां करीब 13 हजार करोड़ रुपये का नुकसान हुआ है। मानवीय क्षति अलग से है। केंद्र सरकार की ओर से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने पंजाब को 1600 करोड़ रुपये का राहत पैकेज भी दिया है। हरियाणा सरकार और राज्य के लोगों ने बाढ़ प्रभावित पंजाब के लोगों की मदद उस स्थिति में की है, जब दोनों राज्यों के बीच लंबे समय से जल विवाद चला आ रहा है। अलग हाई कोर्ट, अलग राजधानी और एसवाईएल नहर के निर्माण में पंजाब द्वारा सुप्रीम कोर्ट के आदेश की अनदेखी जैसे कई ऐसे मामले हैं, जो दोनों राज्यों के बीच तकरार का कारण बने हुए हैं, लेकिन हरियाणा के लोगों ने इन सभी विवादों को पीछे छोड़कर न केवल पड़ोसी धर्म निभाया, बल्कि पंजाब के लोगों को अपने राज्य में शरण देने का काम भी किया है।

हरियाणा के मुख्यमंत्री नायब सिंह सैनी ने पंजाब सरकार के बिना मांगे पांच करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता भिजवाई है। राज्य सरकार और प्रदेश के लोगों की ओर से पंजाब के विभिन्न जिलों में अभी तक करीब 700 ट्रक राहत सामग्री के भेजे जा चुके हैं। मुख्यमंत्री ने सभी मंत्रियों, सांसदों, विधायकों और भाजपा पदाधिकारियों से कहा है कि वे सामाजिक संगठनों तथा प्रशासनिक अधिकारियों की मदद से पंजाब के जिलों में मदद भेजने का सिलसिला लगातार जारी रखें। हरियाणा ने केवल पंजाब की ही मदद नहीं की, बल्कि हिमाचल प्रदेश और जम्मू-कश्मीर की सरकारों को भी पांच-पांच करोड़ रुपये की आर्थिक सहायता भिजवाई है। पंजाब के लोग मेहनती और जांबाज होते हैं। वे फिर से उठ खड़े हो रहे हैं, लेकिन जिस समय उन्हें सहारे की जरूरत थी, उस समय हरियाणा के लोगों ने उनका हाथ थामा और सारे विवादों को भुलाकर मानवता को ऊपर रखा।

पंजाब की मदद करने का यह सिलसिला राज्य के हर जिले से अभी भी बना हुआ है। मुख्यमंत्री नायब सिंह सैनी स्वयं हरियाणा के दौरे पर हैं। कई जिलों में प्राकृतिक आपदा से प्रभावित लोगों से मिलकर न केवल उनका हालचाल जान चुके हैं, बल्कि अधिकारियों को पीड़ितों की मदद के निर्देश दे रहे हैं। भाजपा द्वारा पूरे देश में दो अक्टूबर तक सेवा पखवाड़ा मनाया जा रहा है। भाजपा सरकार और संगठन ने इस पूरे सेवा पखवाड़े के दौरान बाढ़ पीड़ितों की मदद करने के साथ ही स्वच्छता मुहिम चलाने का निर्णय लिया है। अभियान के तहत गांवों से जलभराव की स्थिति से निपटने को प्राथमिकता सूची में रखा गया है। मोटर और पंपसेट का इंतजाम किया जा रहा है, ताकि बाढ़ के पानी से थमी जिंदगी को फिर से रफ्तार दी जा सके।

मुख्यमंत्री नायब सिंह सैनी ने पंजाब के मुख्यमंत्री भगवंत मान को पत्र लिखकर कहा है कि संकट की इस घड़ी में हरियाणा उनके साथ खड़ा है। पंजाब के लोगों को यदि पीने के पानी की आवश्यकता होगी तो हरियाणा अपने भूमिगत जल से भी पानी उपलब्ध करवाएगा। आज पानी की नहीं, बल्कि बाढ़ से प्रभावित लोगों को सहायता की आवश्यकता है और हरियाणा सरकार हरसंभव सहायता प्रदान कर रही है। भाजपा ने जिलों में सामाजिक संगठनों के साथ मिलकर भोजन सामग्री, कपड़े, पानी की बोतलें, दवाइयां, तिरपाल, कंबल और दैनिक उपयोग की वस्तुएं जुटाने में अहम भूमिका निभाई है। अब उन्हें योजनाबद्ध तरीके से पंजाब के बाढ़ प्रभावित जिलों में भेजा जा रहा है। हरियाणा के राहत सामग्री से भरे ये ट्रक सिर्फ सामग्री ही नहीं लेकर जा रहे, बल्कि यह संदेश भी दे रहे हैं कि पंजाब इस समय अकेला नहीं है।

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या वक्फ संशोधन कानून पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला वक्फ बोर्डों की मनमानी पर अंकुश लगाने वाला है?

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल
क्या मैच रेफरी पर कार्रवाई से आइसीसी का इन्कार पाकिस्तान के मुंह पर तमाचा है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

'वनतारा' में जंतुओं का हो रहा इलाज,
इसे देख कुछ 'जंतुगण' फील कर रहे खाज।
फील कर रहे खाज बेचारों का दिल रोता,
कोई अच्छा काम इन्हें बर्दाश्त न होता!
जा पहुंचे वे कोर्ट, कोर्ट ने भी फटकारा,
कुछ प्राकृतिक इलाज करे इनका 'वनतारा'!!
- ओमप्रकाश तिवारी

मंथन

अभिषेक कुमार सिंह
संस्था-टेली परफार्मेंस से संबद्ध

संविदा कर्मियों के हित का सवाल

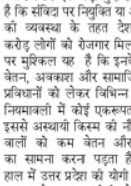

उत्तर प्रदेश की योगी सरकार ने उत्तर प्रदेश आउटसोर्स सेवा निगम लिमिटेड का गठन कर अस्थायी किस्म की नौकरी करने वालों के हित में एक महत्वपूर्ण पहल की है

सरकारी विभागों में आउटसोर्सिंग का बढ़ता चलन। फाइल

दुनिया के किसी भी देश के लिए रोजगार एक बड़ा मुद्दा है। अनुमान है कि संविदा पर नियुक्ति या आउटसोर्स की व्यवस्था के तहत देश में सवा करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है, पर मुश्किल यह है कि इनके नियमित वेतन, अवकाश और सामाजिक सुरक्षा प्रविधानों को लेकर विभिन्न राज्यों की नियमावली में कोई एकरूपता नहीं है। इससे अस्थायी किस्म की नौकरी करने वालों को कम वेतन और असुरक्षा का सामना करना पड़ता है। ऐसे में हाल में उत्तर प्रदेश की योगी सरकार ने उत्तर प्रदेश आउटसोर्स सेवा निगम लिमिटेड का गठन कर एक महत्वपूर्ण पहल की है।

एक गैर-लाभकारी संस्था के रूप में संचालित होने वाली इस पब्लिक लिमिटेड कंपनी यानी आउटसोर्स सेवा निगम की मुख्य जिम्मेदारी भर्ती प्रक्रिया में पारदर्शिता लाना और अस्थायी कर्मचारियों के जुड़े कई मुद्दों का समाधान करना है। कंपनीज एक्ट-2013 के सेक्शन-8 के तहत गठित इस निगम के अस्तित्व में आने से अब उत्तर प्रदेश के सरकारी विभाग आउटसोर्सिंग एजेंसियों का चयन खुद नहीं करेंगे, बल्कि उन्हें नए बनाए गए एक पोर्टल (जेईएम) के जरिए निष्पक्ष और पारदर्शी प्रक्रिया के तहत एजेंसियों का चयन करना होगा। यूपी सरकार का दावा है कि यह कदम उन लाखों कर्मचारियों को राहत दिलाएगा, जिन्हें एजेंसियों के जरिए मिलने वाले काम और वेतन संबंधी शोषण का सामना करना पड़ता है। अकेले उत्तर प्रदेश के 93 सरकारी विभागों में ऐसे 11 लाख कर्मचारी बताए जाते हैं, जिन्हें नियुक्ति देने वाली एजेंसियों से वेतन संबंधी विसंगतियों और नौकरी की असुरक्षा आदि का सामना करना पड़ता है। पूरे देश के स्तर पर देखें तो केंद्र और राज्य स्तर पर करीब 30-43 फीसद कार्यबल अस्थायी, संविदा या आउटसोर्स के तहत काम कर रहा है, जिसमें डाटा एंट्री, क्लर्की, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी प्रमुख सेवाएं शामिल हैं। 2014 के एक अध्ययन के अनुसार, कुल सरकारी कार्यबल (केंद्र-राज्य) के 43 फीसद (लगभग 1.23 करोड़) कर्मचारी अस्थायी हैं। हाल के रुझानों को देखते हुए यह संख्या वित्त वर्ष 2024-25 की समाप्ति तक डेढ़ से दो करोड़ तक पहुंच सकती है, खासकर स्वास्थ्य, शिक्षा और इन्फ्रास्ट्रक्चर जैसे क्षेत्रों में। संयुक्त राष्ट्र के अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आइएलओ) इंडिया एंप्लायमेंट रिपोर्ट 2024 के अनुसार संगठित क्षेत्र में संविदा पर नियुक्ति बढ़ी है।

आउटसोर्सिंग एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें कोई विभाग अपने काम किसी बाहरी एजेंसी को सौंप देता है। इस व्यवस्था में कोई कर्मचारी किसी विभाग या संस्था के एंप्लाई न होकर उस बाहरी एजेंसी का कर्मचारी होता है। एजेंसियां कम लागत पर कर्मचारियों को अनुबंध के जरिए भर्ती करती हैं और अनुबंध खत्म होने पर कर्मचारियों को हटा दिया जाता है या फिर उनका अनुबंध रिन्यू कर दिया जाता है। जहां तक सरकारी विभागों में आउटसोर्सिंग की बात है, तो इसका मुख्य उद्देश्य लागत में कटौती करना, भर्ती प्रक्रिया में तेजी लाना यानी त्वरित भर्ती और प्रशासनिक बोझ कम करना है। दुनिया के अन्य हिस्सों की तरह भारत में भी देखा जा रहा है कि स्थायी भर्तियों या यानी सरकारी नौकरियों की संख्या में कमी आ रही है। इसके स्थान पर अस्थायी/संविदा नौकरियों में वृद्धि हो रही है।

समस्या यह है कि बाह्य एजेंसियों की मार्फत नियुक्त किए जाने वाले अस्थायी, संविदा या आउटसोर्स कर्मचारियों को अक्सर सीमित वेतन, कम सामाजिक सुरक्षा और नौकरी की अनिश्चितता का सामना करना पड़ता है। एजेंसियों पर कर्मचारियों की सैलरी रोकने और उनका शोषण करने के आरोप लगते रहे हैं। ऐसे अस्थायी कर्मचारियों के हितों के मद्देनजर सरकार के स्तर पर उन प्रबंधों की जरूरत लंबे समय से थी, जो कर्मचारियों के वेतन और सामाजिक सुरक्षा आदि पहलुओं की निगरानी करे और उनके हितों को सुरक्षित करे। दावा है कि उत्तर प्रदेश आउटसोर्स सेवा निगम ऐसे कर्मचारियों को नियमित मानदेय, सीधे वेतन हस्तांतरण और गारंटीकृत ईपीएफ एवं ईएसआइ अंशदान के साथ-साथ मातृत्व अवकाश और अंतिम संस्कार सहायता जैसे सामाजिक सुरक्षा प्रविधानों का लाभ दिलाने में मददगार साबित होगा। साथ ही, यह सुनिश्चित किया जाएगा कि आउटसोर्स कर्मचारियों की नियुक्ति कम से कम तीन वर्षों के लिए हो। इसके अलावा उन्हें हर महीने एक से पांच तारीख के बीच सीधे उनके बैंक खाते में वेतन मिले। यदि निगम के जरिए उत्तर प्रदेश सरकार अस्थायी नौकरियों से जुड़े लोगों के हितों का पोषण कर पाई और उनकी समस्याओं का हल निकाल पाई, तो यह प्रबंध रोजगार के क्षेत्र में एक नया प्रतिमान गढ़ सकेगा।

****

दैनिक जागरण

निरंतर प्रयास ही सफलता का सूत्र है

मतांतरण रोधी कानून

विभिन्न राज्यों के मतांतरण रोधी कानूनों को चुनौती देने वाली याचिकाओं पर सुप्रीम कोर्ट की ओर से संबंधित राज्यों को नोटिस देना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश, गुजरात आदि के मतांतरण रोधी कानूनों को जमीयत उलमा ए हिंद और सिटीजन फार जस्टिस एंड पीस जैसे संगठनों ने यह कहते हुए चुनौती दी है कि ये कानून अलग-अलग पंथों से संबंधित जोड़ों को परेशान करने का जरिया बन गए हैं। इन संगठनों की ओर से चाहे जो कहा जाए, सच यह है कि देश में कई समूह छल-कपट और लोभ-लालच से मतांतरण कराने में लगे हुए हैं। वास्तव में भारत शातिर इरादों से कराए जाने वाले मतांतरण का भुक्तभोगी है। छल-छद्म से मतांतरण अभियान स्वतंत्रता के बाद से ही शुरू हो गए थे। ऐसे अभियान ईसाई मिशनरियों की ओर से शुरू किए गए और उन्होंने पहले पूर्वोत्तर राज्यों की जनजातियों को निशाना बनाया और फिर मध्य प्रदेश, ओडिशा जैसे राज्यों के जनजातीय बहुल इलाकों को। क्या यह किसी से छिपा है कि पूर्वोत्तर के साथ मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड और ओडिशा में न जाने कितने आदिवासी ईसाई बन चुके हैं। ऐसा कोई दावा हास्यास्पद ही होगा कि ये गरीब-अशिक्षित लोग अंतःप्रेरणा से ईसाई बने। ईसाई मिशनरियां किस तरह बेलगाम हैं, इसका पता पंजाब में उनकी सक्रियता से चलता है।

जैसे मतांतरण कराने वाली ईसाई मिशनरियों को सारी दुनिया के लोगों को यीशु की शरण में लाने की सनक सवार है, वैसे ही कुछ इस्लामी संगठन यह जिद पकड़े हैं कि सभी को दीन की राह पर चलना चाहिए। यह एक तथ्य है कि दीन की दावत देने के लिए दावा सेंटर चलाए जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त कुछ मजहबी कट्टरपंथी तत्व भी लोगों का छल-बल से मतांतरण कराते हैं। इसका एक उदाहरण कुछ समय पहले उत्तर प्रदेश के बलरामपुर में छांगुर बाबा के काले कारनामे से मिला था। ऐसे तमाम उदाहरणों के बाद भी यदि कुछ लोगों को लगता है कि मतांतरण रोधी कानून धार्मिक स्वतंत्रता का हनन करने वाले हैं तो इसका मतलब है कि वे मुगालते में हैं। ऐसे लोगों को यह भी लगता है कि लव जिहाद एक कपोल कल्पना है। उन्हें इससे परिचित होना चाहिए कि यह शब्द केरल हाई कोर्ट की देन है। उसने अंतर धार्मिक विवाह के कई मामलों में यह पाया था कि युवतियों को मतांतरित करने के लिए उन्हें प्रेमजाल में फंसाया गया। बाद में ऐसे मामले देश के अन्य हिस्सों से सामने आने का जो सिलसिला शुरू हुआ, वह थमने का नाम नहीं ले रहा है। ऐसे कुछ मामलों में दोषियों को सजा भी हो चुकी है, लेकिन इसके बाद भी कुछ लोग यह कहते हैं कि ऐसा कुछ नहीं है। वस्तुतः इसी कारण एक के बाद एक राज्यों को मतांतरण रोधी कानून बनाने पड़े हैं।

विकास हो पैमाना

बिहार में विधानसभा चुनाव की घड़ी नजदीक है। पिछले कुछ दिनों से राजनीतिक हलके में बयान और उसपर प्रतिक्रिया के बीच मूल मुद्दे किनारे होते दिख रहे। आम लोग भी वाद-प्रतिवाद में उलझे हैं। हर चौक-चौराहे पर लोग दो खेमों में बंटकर अपनी समझ दूसरे पर थोपने की कोशिश कर रहे। कई बार नेता से लेकर आमजन तक की भाषाई मर्यादा भी टूटती दिखती है। ऐसा लग रहा कि यह चुनाव बहुत खास होगा, अलग होगा। हर चुनाव में ऐसा ही लगता है। अंतिम क्षण में परिस्थितियां कुछ अलग रूप ले लेती हैं। इन सब के बीच एक अहम मुद्दा विकास अपनी जगह बनाता तो दिख रहा है, लेकिन इसकी गति फिलहाल धीमी है। उम्मीद की जानी चाहिए कि आगे यह मुद्दा गति पकड़ेगा। एक वर्ग ऐसा भी है, जो शोर के बीच विकास को आधार बनाकर बात करना चाहता है। लेकिन, शोर-शराबे के बीच उसकी चल नहीं पाती। यही वजह है कि राजनीतिक दल भी मूल मुद्दे से भटककर ऐसे मुद्दे की ओर उन्मुख हो जाते हैं, जिसमें शोर मचाने वाले ज्यादा रुचि रखते हैं। विकास का मुद्दा पक्ष के पास भी है और विपक्ष के पास भी। बात भरोसे को लेकर फंसती है। आम जन जो निर्णय ले, लेकिन स्वयं की भलाई के लिए जरूरी है कि वह विकास के मुद्दे पर राजनीतिक दलों को चर्चा के लिए विवश करे। अच्छा होगा कि आम जनता राजनीतिक दलों से शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, भ्रष्टाचार, उद्योगों की स्थापना को लेकर सवाल पूछें। इसी में उनकी भलाई है।

> स्वयं की भलाई के लिए जरूरी है कि आमजन राजनीतिक दलों को विकास पर चर्चा के लिए विवश करें

सशक्त भारत के शिल्पकार मोदी

अमित शाह

पीएम मोदी ने देश को केवल आर्थिक - राजनीतिक रूप से ही नहीं, मानसिक - सांस्कृतिक रूप से भी सबल बनाया है

अवधेश राजपूत

17 सितंबर का दिन कई कारणों से महत्वपूर्ण है। इस दिन सभी शिल्पकार एवं कामगार विश्वकर्मा जयंती मनाते हैं। इसी दिन हैदराबाद को क्रूर निजाम एवं रजाकारों से मुक्ति मिली थी और आज के ही दिन एक ऐसे जनसेवक का भी जन्म हुआ, जिन्होंने अपना पूरा जीवन देश और देशवासियों को समर्पित कर दिया- हमारे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी। मोदी जी का यह जन्मदिन विशेष है, क्योंकि यह उनका 75वां जन्मदिन है। मैं 140 करोड़ देशवासियों की ओर से उन्हें मनपूर्वक जन्मदिन की बधाई देता हूं और ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि भारत के मजबूत भविष्य के निमित्त वे उन्हें लंबी आयु, ऊर्जा और स्वास्थ्य प्रदान करें।

प्रधानमंत्री मोदी के साथ दशकों से कार्य करते हुए मैंने यह अनुभव किया है कि उनका व्यक्तित्व राजनेता से बढ़कर राष्ट्रहित को समर्पित एक ध्येयनिष्ठ नेतृत्वकर्ता का है। उनके नेतृत्व की विशेषता है कि वे अपने शासन में समाज के सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित करने की दृष्टि रखते हैं। यही कारण है कि उनकी सरकार में गरीब-कल्याण को केंद्र में रखकर अनेक योजनाएं न केवल शुरू हुईं, अपितु सफलतापूर्वक अपने लक्ष्यों को प्राप्त भी कर रही हैं।

हम देख सकते हैं कि जनधन योजना ने 50 करोड़ से अधिक लोगों को बैंकिंग व्यवस्था से जोड़ते हुए वित्तीय समावेशन की नई इबारत लिखी, उज्ज्वला योजना ने घर-घर तक धुएं से मुक्ति और सम्मानजनक जीवन का संदेश पहुंचाया, आयुष्मान भारत ने गरीबों को स्वास्थ्य की सुरक्षा दी, तो वहीं प्रधानमंत्री आवास योजना ने गरीब वर्ग को अपने घर का सपना पूरा करने का अवसर दिया। जब भी मैं ऐसी योजनाओं के किसी लाभार्थी की आंखों में संतोष और भरोसा देखता हूं, तो समझ में आता है कि मोदी जी का शासन किस प्रकार जनकल्याण के उद्देश्य को धरातल पर साकार कर रहा है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक रूप में उन्होंने देश के अनेक हिस्सों में समाज के हर वर्ग के साथ संवाद किया। यह वह दौर था, जिसमें उन्होंने देश के आत्मा को नजदीकी से न सिर्फ देखा, बल्कि वे उसकी आंतरिक शक्ति से परिचित हुए। संघ प्रचारक के रूप में ही मोदी जी ने संगठन कला के गुण सीखे और बाद में भाजपा के संगठन शिल्पी के रूप में उन्होंने संगठन कार्य को युगानुकूल बनाने के लिए अनेक सफल नवाचार और प्रयोग किए। मैं स्वयं को सौभाग्यशाली मानता हूं कि भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष रूप में मुझे उनके मार्गदर्शन एवं उनके संगठनात्मक अनुभव को राष्ट्रीय स्तर पर अमल में लाने का अवसर मिला।

कठिन परिस्थितियों में निर्णय लेने की क्षमता से ही मजबूत नेतृत्व की पहचान होती है। इस मामले में मोदी जी की नेतृत्व क्षमता अलग ही लोहे से बनी है। वे हर परिस्थिति में असाधारण धैर्य और स्पष्ट दृष्टि रखते हैं। 2014 के बाद ऐसे अनेक अवसर आए, जब देश को बड़े और कड़े निर्णयों की आवश्यकता थी। ऐसे अवसरों पर मोदी जी ने नेतृत्व के सूत्रों को पूरी दृढ़ता और कुशलता से थामे रखा और राष्ट्रहित के अनुरूप निर्णय लिए। नोटबंदी और जीएसटी जैसे कदमों ने आर्थिक सुधारों को गति देते हुए अर्थव्यवस्था में नया अध्याय जोड़ा। अनुच्छेद-370 का ऐतिहासिक उन्मूलन तो सदियों तक याद रखी जाने वाली घटना है। यह निर्णय केवल राजनीतिक साहस को ही नहीं, अपितु राष्ट्रीय एकता और अखंडता के प्रति मोदी जी की अटूट आस्था को भी दर्शाता है। तीन तलाक जैसी सामाजिक कुरीति पर रोक लगाने का निर्णय महिलाओं के सम्मान और अधिकारों की रक्षा का साहसिक कदम था। ये निर्णय आसान नहीं थे। इनमें से कई निर्णयों का विरोध भी हुआ, लेकिन प्रधानमंत्री कभी विचलित नहीं हुए। उनके भीतर यह दृढ़ विश्वास था कि यदि राष्ट्रहित में कोई कार्य आवश्यक है, तो उसे विरोध और आलोचना की परवाह किए बिना हर परिस्थिति में पूरा किया जाना चाहिए।

जब कोविड महामारी ने पूरी दुनिया को झकझोर दिया था। तब ऐसे कठिन समय में भी मोदी जी ने न केवल जनता को आश्वस्त किया, अपितु देश के उद्योगों, विज्ञानियों और युवाओं को आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर किया। विश्व यह सोच रहा था कि इस महामारी में भारत का क्या हाल होगा, लेकिन यह हमारे नेतृत्व की कुशलता का ही कमाल था कि देश में न केवल रिकार्ड समय में वैक्सीन का निर्माण हुआ, अपितु तकनीक से संचालित निःशुल्क टीकाकरण अभियान के माध्यम से हमने दुनिया के सामने कोविड प्रबंधन का अनुकरणीय माडल प्रस्तुत किया।

मोदी जी के नेतृत्व में भारत ने बार-बार यह सिद्ध किया है कि राष्ट्रीय सुरक्षा और आत्मसम्मान से कोई समझौता संभव नहीं। उड़ी हमले के बाद सर्जिकल स्ट्राइक ने दुनिया को दिखा दिया कि भारत अब आतंकवाद का मूकदर्शक नहीं रहेगा। पुलवामा की घटना के पश्चात हुई बालाकोट एयर-स्ट्राइक ने इस संकल्प को और भी सुदृढ़ किया। पहलगाम में आतंकी हमले के जवाब में 'आपरेशन सिंदूर' ने इस नीति को निर्णायक रूप से स्थापित किया कि जब-जब देश की अस्मिता और नागरिकों की सुरक्षा पर चोट पहुंचेगी, भारत पूरे साहस एवं दृढ़ता से उसका प्रत्युत्तर देगा। इन कार्रवाइयों ने विश्व को भी यह संदेश दिया कि नया भारत अपने हितों की रक्षा के लिए हर परिस्थिति का सामना करने को तैयार है। विदेश नीति में भी मोदी जी की कार्यशैली अद्वितीय है। चाहे पेरिस जलवायु समझौता हो, जी-20 सम्मेलन हो या संयुक्त राष्ट्र में दिया गया संबोधन-हर जगह उनका आत्मविश्वास भारत की बढ़ती शक्ति और गौरव का प्रतीक रहा है।

मोदी जी को जितना मैंने जाना है, उस आधार पर यही कहूंगा कि उनका व्यक्तित्व नीतियों-कार्यक्रमों तक सीमित नहीं है। उनके भीतर एक विशेष करिश्मा है, जिससे वे सीधे जनता से जुड़ जाते हैं। उनकी वाणी में सहजता-सरलता का वह कौशल है, जो उन्हें सीधे जनता के मन तक पहुंचा देता है। वे जब रेडियो पर 'मन की बात' करते हैं, तो करोड़ों लोग महसूस करते हैं कि प्रधानमंत्री सीधे उनसे संवाद कर रहे हैं। किसान, छात्र या गृहिणी, हर कोई उनसे आत्मीयता का अनुभव करने लगता है।

मोदी जी ने भारत को आर्थिक और राजनीतिक रूप से ही नहीं, अपितु मानसिक-सांस्कृतिक रूप से भी सशक्त बनाया है। उन्होंने हर भारतीय में विश्वास जगाया है कि हम विश्व में किसी से कम नहीं हैं। पिछले 11 वर्षों में उनके नेतृत्व में देश ने आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास की नई ऊंचाइयां छुई हैं, जो मेरी नजर में ऐतिहासिक भी है और अद्वितीय भी। वस्तुतः सच्चा नेतृत्व वही होता है, जो हर क्षण राष्ट्र को समर्पित हो और जिसकी दृष्टि वर्तमान से कहीं आगे भविष्य तक देखती हो। मोदी जी का यही व्यक्तित्व आज भारत की सबसे बड़ी शक्ति है।

(लेखक केंद्रीय गृह एवं सहकारिता मंत्री हैं)

response@jagran.com

एक और दुष्प्रचार की हवा निकली

राजीव सचान

वोट, नागरिकता, कब्रिस्तान और खेत आदि छीनने जैसे भड़काने-बरगलाने वाले दावे औंधे मुंह गिर रहे हैं

इसी वर्ष अप्रैल में जब वक्फ संशोधन विधेयक संसद के दोनों सदनों से पारित हुआ था तो विपक्ष ने इसे घोर असंवैधानिक और मनमाना करार दिया था। कुछ विपक्षी नेताओं ने इसे मुसलमानों की मस्जिदें-कब्रिस्तान छीनने वाला कानून बता दिया था-ठीक वैसे ही जैसे नागरिकता संशोधन कानून (सीएए) को मुसलमानों की नागरिकता छीनने वाला बताकर उन्हें सड़क पर उतारा गया था और जिसके नतीजे में कई जगह हिंसा हुई थी। संसद से वक्फ संशोधन विधेयक के पारित होने के बाद जैसे ही उसने कानून का रूप लिया, वैसे ही सुप्रीम कोर्ट उसकी वैधानिकता का परीक्षण करने के लिए तैयार मिला, क्योंकि इस कानून को चुनौती देने के लिए कई याचिकाएं दाखिल कर दी गई थीं। अब ऐसा संसद से बने-संशोधित हुए करीब-करीब प्रत्येक बड़े कानून के साथ होने लगा है। सुप्रीम कोर्ट लोकसभा, राज्यसभा के बाद एक तरह से तीसरे सर्वोच्च सदन की तरह काम करने लगा है।

इधर संसद से पारित होकर कोई विधेयक कानून का रूप लेता है, उधर विपक्षी दलों के कुछ नेता और याचिकाबाज वकील सुप्रीम कोर्ट के दरवाजे पर उसे चुनौती देने के लिए खड़े मिलते हैं। निःसंदेह सुप्रीम कोर्ट को प्रत्येक कानून की संवैधानिकता परखने का अधिकार है, लेकिन क्या अब हर कानून अमल में आने के पहले सुप्रीम कोर्ट पहुंचेगा? तीन कृषि कानूनों के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने एक कदम आगे बढ़कर इन कानूनों की संवैधानिकता पर विचार किए बिना ही उनके अमल पर रोक लगा दी थी। यह सुप्रीम कोर्ट की ओर से अपने अधिकारों का किया जाने वाला खुला-नग्न अतिक्रमण था। इन कानूनों के अमल पर रोक लगाते हुए सुप्रीम कोर्ट ने उनकी समीक्षा के लिए एक समिति गठित कर दी थी, लेकिन जब इस समिति ने अपनी रिपोर्ट दी तो उसने उसे देखने की भी जहमत नहीं उठाई। वह कृषि कानून विरोधी आंदोलन के नेताओं की ओर से राजमार्ग रोकने के मामले में भी हाथ पर हाथ धरे बैठा रहा। अंततः दुष्प्रचार के चलते ऐसी परिस्थितियां बनीं कि मोदी सरकार कृषि कानूनों को वापस लेने पर बाध्य हुई। इससे किसानों का कितना भला हुआ, यह किसान नेता ही जानें। इन कानूनों को लेकर यह अफवाह फैलाई गई थी कि इनके जरिये किसानों के खेत छीने जाएंगे। चूंकि ये कानून अमल में ही नहीं आए, इसलिए कथित किसान नेता यह थोथा दावा कर सकते हैं कि अंततः किसानों के खेत छिनने से बच गए, लेकिन सीएए तो लागू हो चुका है। किसी को पता हो तो बताए कि कितने मुसलमानों की नागरिकता छिनी?

सुप्रीम कोर्ट ने नहीं लगाई वक्फ कानून पर रोक। फाइल

नागरिकता, खेत, कब्रिस्तान या फिर और कुछ छीने जाने का शोर मचाने के लिए किसी नए कानून का निर्माण या फिर उसमें संशोधन किया जाना ही आवश्यक नहीं। अभी हाल में जब चुनाव आयोग की ओर से बिहार में मतदाता सूची के सत्यापन की प्रक्रिया शुरू की गई तो तत्काल यह शोर मचा कि इसका उद्देश्य दलितों, गरीबों, अल्पसंख्यकों यानी मुसलमानों के वोट छीनना है। सुप्रीम कोर्ट ने इस प्रक्रिया को जारी रखने की अनुमति देकर विपक्षी दलों और साथ ही लोकतंत्र के स्वयंभू चैंपियनों के इस दुष्प्रचार की हवा निकाल दी कि चुनाव आयोग बिहार के बेचारे लोगों के वोट छीनने का काम कर रहा है। सुप्रीम कोर्ट ने बिहार के सभी मान्यता प्राप्त दलों को इस मामले में पक्षकार बनाया और उन्हें इसके लिए बाध्य किया कि वे एसआइआर की प्रक्रिया में भाग लें। मरता क्या न करता, वे बेमन से ही सही, यह काम कर रहे हैं।

यह अच्छा हुआ कि सुप्रीम कोर्ट ने वक्फ संशोधन कानून पर पूरी तरह रोक लगाने से इन्कार कर दिया। उसने अपने अंतरिम फैसले में इसके चंद प्रविधानों पर ही रोक लगाई। यह उल्लेखनीय है कि उसने संशोधित कानून में वक्फ बाई यूजर के प्रविधान को खत्म करने को मनमाना नहीं माना। इसका मतलब है कि यह प्रविधान नहीं होगा। पुराने कानून के अनुसार यदि कोई संपत्ति लंबे समय से वक्फ द्वारा इस्तेमाल की जा रही है तो आवश्यक दस्तावेजों के अभाव में भी उसे वक्फ संपत्ति माना जाता था। अब ऐसा नहीं होगा। अब कागज दिखाने होंगे। वक्फ संशोधन कानून के जरिये 14 बड़े बदलाव किए गए थे। सबसे बड़ा बदलाव वक्फ कानून की धारा 40 को खत्म करने का था। इस धारा के तहत वक्फ बोर्डों को किसी भी संपत्ति को अपना बताने का मनमाना अधिकार मिला था। यदि वक्फ बोर्ड ऐसा कर देते थे तो इसके खिलाफ सुनवाई केवल वक्फ ट्रिब्यूनल में ही हो सकती थी। यदि ट्रिब्यूनल भी पीड़ित के प्रतिकूल फैसला दे दे तो उसके खिलाफ केवल रिट याचिका ही दायर हो सकती थी। रिट याचिका का प्रभाव सीमित ही होता है। वक्फ कानून को दमनकारी स्वरूप 1995 में मिला। शायद इसलिए मिला, क्योंकि अयोध्या में विवादित ढांचे के ध्वंस के बाद मुस्लिम कांग्रेस से नाराज थे। कांग्रेस उन्हें संतुष्ट करने के लिए कुछ भी करने को तैयार थी। इसका नतीजा यह हुआ कि वक्फ कानून में ऐसे संशोधन कर दिए गए, जिससे वक्फ बोर्डों को मनमाने अधिकार मिल गए।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

ईश्वर की भाषा

मनुष्य स्वयं को भाषा का आविष्कारक मानता है। यह उसका भ्रम और अहंकार है। ईश्वर क्या असमर्थ था या अकर्मण्य कि इतनी विशाल सृष्टि की रचना करने के बाद उसमें किसी अपूर्णता की संभावना छोड़ देता। संसार में एक वही तो पूर्ण और सर्वसमर्थ है। उसकी एक-एक रचना विस्मित करती है। ईश्वर ने ही मनुष्य को वह भाषा भी दी है, जो अद्वितीय है। यह सार्वभौम भाषा है, जिसका संसार के हर कोने में एकसमान उपयोग किया जा रहा है। मनुष्य वह किसी भी देश, धर्म, संस्कृति का है, यदि उसे अपनी प्रसन्नता प्रकट करनी होती है तो एक ही माध्यम अपनाता है-हंसने का। शोक व्यक्त करने का एक ही ढंग है रुदन। प्रेम, क्रोध, निराशा, आशा, संशय, व्यग्रता, उत्सुकता आदि के भाव एक जैसे ही होते हैं, जो किसी के भी मुख पर सरलता से पढ़े जा सकते हैं। मनोभावों के संप्रेषण के ये माध्यम मनुष्य द्वारा बनाई गई किसी भी भाषा से सशक्त और परिपूर्णता लिए हैं।

यह मनुष्य की अयोग्यता ही है कि वह इस ईश्वरप्रदत्त भाषा में प्रवीण नहीं बन सका और न ही उसका सदुपयोग कर सका है। मनुष्य ने अपनी अयोग्यता को छिपाने के लिए शब्दों को विकल्प बनाया और वही शब्द जिस भी भाषा में हैं, आज वैमनस्य, शत्रुता एवं संघर्ष के बड़े कारण बन गए हैं। इससे जीवन विषम हो गया है। क्या इसे ईश्वर की व्यवस्था के उल्लंघन का दुष्परिणाम माना जाना चाहिए? क्या हम पशु-पक्षियों से नहीं सीख सकते? उनके पास मनुष्य जैसे शब्द नहीं हैं, फिर भी उनका जीवन सुचारु चलता है। वे अपनी आयु भोगते हैं, समूह स्थापित करते हैं। अपने मनोभाव भी अपने ढंग से व्यक्त करते हैं। उनका जीवन मनुष्य की अपेक्षा कहीं शांत और सहज है।

डा. सत्येंद्र पाल सिंह

पर्यावरण के लिए खतरा बनता एसी

सुधीर कुमार

> भारत में एसी से होने वाला वार्षिक कार्बन उत्सर्जन सभी यात्री कारों से होने वाले कुल उत्सर्जन के बराबर पहुंच चुका है

पर्यावरण, स्थिरता और प्रौद्योगिकी के लिए अंतरराष्ट्रीय मंच (आइ-फारेस्ट) द्वारा हाल में जारी रिपोर्ट के अनुसार, भारत में एअर कंडीशनर यानी एसी से होने वाला वार्षिक कार्बन उत्सर्जन सभी यात्री कारों से होने वाले कुल उत्सर्जन के बराबर पहुंच चुका है। अगर यही आलम रहा तो 2030 तक एसी देश में सर्वाधिक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जित करने वाले उपकरण बन जाएंगे। यह रिपोर्ट न सिर्फ आधुनिक जीवनशैली की हकीकत बयां करती है, बल्कि इसके संभावित पर्यावरणीय खतरे के प्रति आगाह भी करती है।

ग्लोबल वार्मिंग, वनोन्मूलन, शहरीकरण, बढ़ती आय तथा घटती मानव अनुकूलन क्षमता के कारण देश में एसी की मांग और कारोबार दिनोंदिन विस्तृत होता जा रहा है। सदी के सबसे गर्म वर्ष के रूप में दर्ज 2024 में अनुमानित तौर पर देश में लगभग डेढ़ करोड़ एसी की बिक्री हुई थी, जबकि 2022 में यह संख्या 75 लाख थी। गर्मी और लू के बढ़ते प्रकोप के कारण शीतलन के लिए एसी पर एक बड़ी आबादी की निर्भरता बढ़ती जा रही है। निस्संदेह पहले इसकी पहुंच केवल धनाढ्य घरों तक थी, लेकिन अब मध्यम से लेकर सामान्य तथा शहरी के साथ-साथ ग्रामीण आबादी भी इसके उपयोग की आदी होती जा रही है। यही कारण है कि देश में शीतलन सबसे तेजी से बढ़ने वाला ऊर्जा-खपत क्षेत्र बनता जा रहा है। एसी के इस्तेमाल की पर्यावरण को दोहरी कीमत चुकानी पड़ती है। एक तरफ एसी के संचालन में ऊर्जा की अत्यधिक खपत होती है। एक पांच स्टार एसी भी एक कुशल पंखे की तुलना में तकरीबन 30 गुना ज्यादा बिजली की खपत करता है। वहीं दूसरी तरफ एसी भले ही कमरे को ठंडक प्रदान करता है, लेकिन इसके समानांतर वह बाह्य वातावरण को गर्म करना भी शुरू कर देता है। एसी से उत्पन्न हाइड्रोफ्लोरोकार्बन रेफ्रिजरेंट की ग्लोबल वार्मिंग क्षमता अन्य ग्रीनहाउस गैसों के मुकाबले हजारों गुना अधिक है। ऐसे में एसी के उपयोग पर सचेत होने की दरकार है, क्योंकि यह जितना सुलभ होता जा रहा है, पर्यावरण के लिए उतना ही हानिकारक साबित हो रहा है।

बहरहाल जलवायु परिवर्तन का स्थायी मुकाबला एसी पर निर्भरता बढ़ाकर नहीं किया जा सकता। इसके लिए पर्यावरण संरक्षण पर ध्यान देना आवश्यक है, जिससे प्रकृति का प्रकोप मानवता पर कम से कम हो। शीतलन के कृत्रिम उपायों के बजाय प्राकृतिक तरीकों पर विचार करना होगा। पौधारोपण पर जोर देकर, जल निकायों का पुनरुद्धार करके तथा ठंडी छत नीति का पालन करके हम अपने घरों और परिवेश को गर्मी का मुकाबला करने के लिए तैयार कर सकते हैं। याद रहे, एसी का प्रयोग स्थायी समाधान प्रस्तुत करने के स्थान पर भविष्य के लिए गंभीर संकट उत्पन्न करता है।

(लेखक बीएचयू में शोधार्थी हैं)

मेलबाक्स

समग्रता में हो विचार

'उपेक्षा के शिकार बुजुर्गों की सुध लें' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में डा. अमिता ने समाज की गहरी संवेदनहीनता को उजागर किया है। भारतीय परंपरा में बुजुर्गों को सम्मान और मार्गदर्शन का प्रतीक माना जाता था, किंतु आज वही परंपरा टूटती दिख रही है। परिवारों की बदलती संरचना और उपभोक्तावादी जीवनशैली ने बुजुर्गों को हाशिए पर धकेल दिया है। वे अनुभव और ज्ञान के भंडार होकर भी बोझ समझे जाने लगे हैं। आलेख में यह तर्क प्रबल ही कहा जा सकता है कि केवल पेंशन या वृद्धाश्रम समस्या का स्थायी हल नहीं हो सकते। जब मानसिकता ही बुजुर्गों को अप्रासंगिक मानने लगे तो योजनाएं केवल दिखावे तक सीमित रह जाती हैं। इससे न केवल पारिवारिक रिश्ते कमजोर होते हैं, बल्कि हमारी सांस्कृतिक जड़ों पर भी गहरी चोट पहुंचती है। नई समस्या डिजिटल उपेक्षा की है। तकनीक से अछूते बुजुर्ग आज के समय में और अधिक अकेले पड़ते जा रहे हैं। संवाद और आत्मसम्मान दोनों ही इस दूरी से प्रभावित हो रहे हैं। ऐसे में अब आवश्यकता है कि सरकार पेंशन के साथ डिजिटल साक्षरता केंद्र स्थापित करे, जहां बुजुर्ग तकनीक सीख सकें। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में इंटरजेनरेशन प्रोग्राम शुरू हों, ताकि युवा पीढ़ी बुजुर्गों से जुड़ सके। परिवारों को भी कानूनी दायित्व से आगे बढ़कर नैतिक जिम्मेदारी निभानी होगी। यह आलेख संवेदनशील और झकझोरने वाला है, जिसने समाज को आईना दिखाने का कार्य किया है। आलोचनात्मक दृष्टि से कहा जा सकता है कि इसमें नीतिगत सुधारों पर और ठोस सुझाव दिए जाते तो आलेख और अधिक प्रभावी होता। फिर भी, इसमें निहित चेतावनी हमें गंभीर मंथन और ठोस कार्रवाई के लिए प्रेरित करती है। इस दिशा में समग्र दृष्टि से विचार होना चाहिए।

awanishg30@gmail.com

बेइज्जती से बेचैन हुआ पाकिस्तान

एशिया क्रिकेट कप के फाइनल में भारतीय टीम की जीत के बाद पाकिस्तान की टीम के सदस्यों से हाथ न मिलाना, भारतीय खिलाड़ियों के देश के प्रति समर्पण को दर्शाता है। पहलगाम हमले में पाकिस्तान द्वारा निर्दोष लोगों की बर्बरता से हत्या और उसके बाद हुए युद्ध का यह एक स्पष्ट जवाब है। पाकिस्तानी क्रिकेट टीम अब भी इस बात से तिलमिला रही है और अपनी देशभक्ति का प्रमाण देने में जुटी है। भारतीय क्रिकेट टीम के कप्तान सूर्य कुमार यादव ने भी अपनी जीत को पहलगाम आतंकी हमले में मारे गए लोगों और आपरेशन सिंदूर के सैनिकों को समर्पित कर देशभक्ति की एक मिसाल पेश की है। भारतीय टीम ने पाकिस्तानी टीम से हाथ न मिलाकर देश के प्रति अपनी भक्ति और आतंकवादी हमले में मारे गए लोगों के प्रति समर्पण का परिचय दिया है, जो पूरी तरह से उचित है। पाकिस्तान के साथ मैच खेलना केवल नियमों की विवशता थी। भारतीय टीम ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पाकिस्तान की बेइज्जती कर अपने प्रतिद्वंद्वियों को बेचैन कर दिया है।

अभिलाषा गुप्ता, मोहाली

नेपाल में शांति की आवश्यकता

नेपाल में जेन-जी के आंदोलन के बाद सुशीला कार्की के नेतृत्व में एक अंतरिम सरकार का गठन किया गया है। हालांकि नवगठित मंत्रिमंडल को लेकर जेन-जी के नेता सुदन गुरुंग ने आपत्ति जताई है। इस स्थिति में यह चिंता बढ़ रही है कि क्या अंतरिम सरकार सुशासन और आंदोलनकारियों की शिकायतों का समाधान करते हुए मार्च 2026 में चुनाव कराने में सफल होगी? लोकतंत्र का अर्थ केवल लोक की मनमानी नहीं है, बल्कि यह एक निश्चित विधान में सबको बंधने की आवश्यकता है। गुरुंग का रवैया कुछ अलग है। जेन-जी गुटों में बंटा हुआ है, जिसमें मतभेद भी उभरकर सामने आ रहे हैं। भारत जैसे लोकतांत्रिक देश से सबक लेकर नेपाल अपनी कठिनाइयों का समाधान ढूंढ सकता है। यूपी, उत्तराखंड, बिहार जैसे राज्यों के साथ नेपाल का सांस्कृतिक-पारिवारिक रिश्ता है, जिससे नेपाल सहित पड़ोसी लोकतांत्रिक देशों का भारत को वैचारिक प्रेरक बनाने में कोई नुकसान नहीं है।

मुकेश कुमार मनन, पटना

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मैल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*

कल्पमेधा

जब खुशी का एक दरवाजा बंद होता है तो दूसरा खुल जाता है, लेकिन हम अक्सर बंद दरवाजे की तरफ काफी देर तक देखते रहते हैं और जो हमारे लिए खुला है, उसको नहीं देखते।

- हेलेन केलर

पारदर्शिता का तकाजा

चुनाव आयोग एक स्वायत्त संस्था है, जो संविधान के अनुसार देश में चुनाव प्रक्रिया का संचालन करता है। संवैधानिक प्राधिकार होने के नाते आयोग से उम्मीद की जाती है कि वह निष्पक्ष और पारदर्शी तरीके से काम करेगा। देश में नागरिकों के मताधिकार को सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी भी इसी की है। ऐसे में सवाल है कि अगर चुनाव आयोग कानून और मानदंडों के मुताबिक अपना काम कर रहा है तो उसकी कार्यप्रणाली को संदेह की नजर से क्यों देखा जा रहा है? आयोग पर निष्पक्षता और पारदर्शिता नहीं बरतने के आरोप बार-बार क्यों लग रहे हैं? बिहार में मतदाता सूची के विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआइआर) की प्रक्रिया पर सवाल उठने की वजह क्या है? इस मामले को सर्वोच्च न्यायालय ने भी गंभीरता से लिया है। हालांकि शीर्ष अदालत ने उम्मीद जताई है कि बिहार में चुनाव आयोग एसआइआर में कानून का पालन कर रहा होगा। साथ ही आगाह भी किया है कि अगर ऐसा नहीं हुआ तो इस पूरी प्रक्रिया को रद्द कर दिया जाएगा। इससे साफ है कि चुनाव आयोग पर विश्वास की नींव अब कमजोर होती नजर आ रही है।

बिहार में सबसे पहले एसआइआर की प्रक्रिया के समय को लेकर सवाल उठे थे। विपक्षी दलों का तर्क था कि राज्य में कुछ माह बाद विधानसभा चुनाव होने वाले हैं और यहां से एसआइआर की शुरुआत करना चुनाव आयोग की निष्पक्षता पर संदेह पैदा करता है। इसके बाद देश एवं राज्य की नागरिकता के प्रमाण के लिए तय किए ग्यारह दस्तावेजों में आधार कार्ड को शामिल नहीं करने पर आयोग सवालों के घेरे में आ गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने आयोग को इस विषय पर विचार करने को कहा था, लेकिन आयोग ने यह तर्क देते हुए इनकार कर दिया कि आधार कार्ड पर विश्वास नहीं किया जा सकता। इसके बाद शीर्ष अदालत को इस पर नए सिरे से निर्देश देना पड़ा, तब आयोग ने बिहार में अंतरिम व्यवस्था के रूप में आधार कार्ड को नागरिकता के प्रमाण दस्तावेजों की सूची में शामिल किया। यहां गौर करने वाली बात है कि आज बैंक खाता खुलवाने से लेकर रसोई गैस के पंजीकरण के लिए आधार जरूरी है, तो फिर उसकी विश्वसनीयता को स्वीकारने में संकोच क्यों है। और फिर इस बात की क्या गारंटी है कि आयोग ने नागरिकता प्रमाण के तौर पर जिन ग्यारह दस्तावेजों को शामिल किया है, उनमें कोई फर्जीवाड़ा नहीं हो सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी स्पष्ट किया है कि चुनाव आयोग एक संवैधानिक प्राधिकार है और उसे देश भर में एसआइआर की प्रक्रिया शुरू करने से रोका नहीं जा सकता। सवाल सिर्फ यह है कि इस प्रक्रिया में कानून का पालन हो रहा है या नहीं। चुनाव आयोग अब राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में भी विशेष गहन पुनरीक्षण की प्रक्रिया शुरू करने की तैयारी में है। ऐसे में यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि बिहार में जो आशंकाएं पैदा हुई हैं, उनके निराकरण के बिना आयोग आगे कैसे बढ़ सकता है। इसमें दोराय नहीं कि मतदाता सूची को साफ-सुथरा बनाना चुनाव आयोग की जिम्मेदारी है। सूची से उन लोगों के नामों को हटाना जरूरी है, जिनकी मौत हो चुकी है या जिनके पास वैध मतदाता पहचान पत्र नहीं हैं। मगर, इस कवायद में यह ध्यान रखना भी जरूरी है कोई पात्र नागरिक मतदान के अधिकार से वंचित न हो। इसका उत्तरदायित्व भी चुनाव आयोग का ही है।

जानलेवा खेल

डिजिटल होती दुनिया में कोई बच्चा जब स्मार्टफोन या कंप्यूटर में मशगूल रहने लगता है, तो उसके अभिभावकों की प्रथम दृष्टया धारणा यही बनती है कि वह तकनीक के उपयोग को लेकर बहुत तीक्ष्ण बुद्धि वाला है। मुश्किल तब होती है, जब तकनीक में बच्चों या किशोरों की यही व्यस्तता उनके विवेक और व्यक्तित्व पर बेहद घातक असर डालती है और कई बार जानलेवा भी साबित होती है। गौरतलब है कि लखनऊ के गांव धनुवासाड़ में एक तेरह वर्षीय किशोर को आनलाइन गेम की लत लग गई थी और इसी क्रम में वह अपने पिता के खाते में जमा तेरह लाख रुपए हार गया। जब पिता को पता चला तो डर की वजह से किशोर ने आत्महत्या कर ली। यह इस तरह की कोई अकेली घटना नहीं है। ऐसे अनेक मामले सामने आ चुके हैं, जिनमें आनलाइन गतिविधियों में लिप्त कई बच्चों की पहुंच अपने घर के पैसों तक हो जाती है और गेम में डिजाइन किए गए लालच के जाल में फंस कर वे अपने माता-पिता की मेहनत से कमाए गए पैसे बाजी में हार जाते हैं।

तकनीकी कौशल हासिल करना और अपना ज्यादातर वक्त उसमें खो देना अलग-अलग बातें हैं। आज किशोरावस्था से गुजर रहे ऐसे बच्चों की संख्या बहुत बड़ी हो चुकी है, जो अपनी पढ़ाई-लिखाई से लेकर खेल और मनोरंजन तक के लिए पूरी तरह डिजिटल संसाधनों पर निर्भर होते जा रहे हैं और दोस्ती या खेलों की वास्तविक दुनिया से कटते जा रहे हैं। इसी क्रम में कोई बच्चा इंटरनेट पर कब किस अवांछित गतिविधियों में अपना वक्त जाया करने लगता है, अभिभावकों को अंदाजा भी नहीं हो पाता। आनलाइन गतिविधियों का लती हो चुका बच्चा जब किसी जानलेवा जंजाल में फंस जाता है, तब जाकर अभिभावक चिंतित होते हैं। मगर तब तक कई बार देर हो चुकी होती है। सवाल है कि इस तरह के अंजाम तक आने से पहले जिस तरह की स्थितियां बनती हैं, अभिभावकों को उन पर गौर करना, बच्चों को वक्त देना, उन्हें असली दुनिया में वापस लाना जरूरी क्यों नहीं लगता? वहीं सरकार ने भी जुए की तरह खेले जाने वाले आनलाइन खेलों की दुनिया को लगभग खुला छोड़ रखा है। नतीजतन, समाज से लेकर सरकार तक की बहुस्तरीय लापरवाही के शिकार हमारे मासूम हो रहे हैं।

दलहन में आत्मनिर्भरता की दरकार

देश का दलहन आयात विगत छह वर्षों में बढ़ कर चौरासी फीसद तक जा पहुंचा है। म्यांमा, मोजांबिक, तंजानिया, आस्ट्रेलिया और कनाडा जैसे देशों से मुख्य रूप से दालों का आयात किया जाता है। यह स्थिति तब है, जब भारत दुनिया के प्रमुख दाल उत्पादक देशों में शामिल रहा है।

मनीष अग्रहरि

यह आश्चर्यजनक है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है, फिर भी यहां लोगों की थाली में जो दाल रहती है, वह जरूरी नहीं कि स्वदेशी ही हो। संभावना है कि वह किसी दूसरे देश से अच्छे-खासे दामों में आयात की गई हो। इससे खुदरा बाजार में हम महंगी दाल खरीदने के लिए विवश हो जाते हैं। दूसरी तरफ, इससे देश को राजस्व का नुकसान भी झेलना पड़ता है। एक आंकड़े के मुताबिक, बीते वर्ष इकतीस करोड़ से अधिक कीमत की दाल आयात की गई है। देश का दलहन आयात विगत छह वर्षों में बढ़ कर चौरासी फीसद तक जा पहुंचा है। देश में कुल खपत की लगभग चौदह फीसद दाल विदेश से आयात की जाती है। म्यांमा, मोजाबिक, तंजानिया, आस्ट्रेलिया और कनाडा जैसे देशों से मुख्य रूप से दालों का आयात किया जाता है। यह स्थिति तब है, जब भारत दुनिया के प्रमुख दाल उत्पादक देशों में शामिल रहा है। हमारे यहां दाल की खपत विश्व की कुल खपत का करीब सत्ताईस फीसद है। देश के कुल खाद्यान्न उत्पादन में दलहनी फसलों की हिस्सेदारी लगभग बीस फीसद तक है। चालू वित्तीय वर्ष में देश में सड़सठ लाख टन विभिन्न दालों का आयात किया गया, जो अब तक का सर्वाधिक है और इसमें पीली मटर की हिस्सेदारी सबसे ज्यादा इकतीस फीसद तक है।

विशेषज्ञों का अनुमान है कि वर्ष 2025 के अंत तक पीली मटर का आयात 20.4 लाख टन तक पहुंच जाएगा, जबकि 2024 में यह 11.6 लाख टन था। पीली मटर के अलावा चना, मसूर, उड़द और अरहर दाल के आयात में तेजी से उछाल देखा गया है। अगर हम विश्व की कुल दलहन उत्पादकता की बात करें, तो भारत के बाद म्यांमा, कनाडा, चीन, आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में दाल की सर्वाधिक पैदावार होती है। पिछले वर्ष कनाडा साठ लाख सत्तर हजार मीट्रिक टन दाल उत्पादन के साथ विश्व का एक प्रमुख दाल उत्पादक देश बन कर उभरा, जबकि एक दशक पूर्व उसका उत्पादन बीस लाख मीट्रिक टन से भी कम था। कनाडा की यह वृद्धि दालों की बढ़ती वैश्विक मांग की पूर्ति से होने वाली कमाई और टिकाऊ कृषि पद्धतियों को अपनाने के परिणामस्वरूप हुई है।

दूसरे देशों में दालों के बढ़ते रकबे पर एक रोचक तथ्य यह है कि वर्ष 1970 के दशक के मध्य में भारत ने आस्ट्रेलिया को कुल 400 ग्राम दलहनी फसलों का बीज दिया था और अगले एक दशक में वहां नब्बे लाख हेक्टेयर जमीन में दलहन की खेती की जाने लगी। आज स्थिति यह है कि हम आस्ट्रेलिया से स्वयं दाल आयात करने लगे हैं।

हालांकि, केंद्र सरकार किसानों को दलहन सहित अन्य खाद्यान्नों का उचित मूल्य दिलाने के लिए कृषि लागत एवं मूल्य आयोग की सहायता से न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) की घोषणा करती है। इसके तहत प्रयास होता है कि फसल उत्पादन की लागत से कम से कम डेढ़ गुना से अधिक दाम किसानों को मिले। मूंग, उड़द, मसूर, अरहर और चना की फसलें भी उन तेईस फसलों में शामिल हैं, जो एमएसपी के तहत आती हैं। न्यूनतम समर्थन मूल्य का चलन वर्ष 1966 से है। शुरुआत में यह सिर्फ गेहूं और धान के लिए था, मगर बाद में इसमें कई अन्य फसलों को भी शामिल किया गया।

देश में दलहनी फसलों का रकबा बढ़ाने के लिए केंद्र सरकार वर्ष 2007 से राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन योजना चला रही थी, जिसे 2024-2025 में बदल कर राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा एवं पोषण मिशन कर दिया गया है। इस योजना के तहत उच्च उत्पादन वाली उन्नत प्रजातियों का

> **अधिकांश दलहनी फसलें अपने पचहत्तर फीसद नाइट्रोजन की पूर्ति जड़ों से कर लेती हैं, इसकी वजह इनकी जड़ों में पाई जाने वाली गांठों में राइजोबियम नामक जीवाणु है। ये जीवाणु नाइट्रोजन को खेत में पहुंचा देते हैं। इससे एक ओर जहां दलहनी फसलों को इसकी पूर्ति हो जाती है, तो दूसरी ओर आगामी फसल के लिए भी मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन बच जाती है। इस तरह से किसानों को यूरिया के रूप में एक बड़े खर्च की बचत हो जाती है, जिससे लागत में कमी आती है। दलहनी फसलों के पौधे फैल कर बढ़ते हैं, जिससे ये मृदा को आवरण प्रदान करते हुए उसके कटाव को रोकते हैं। इतने फायदे होने के बाद भी यदि देश को दालों का आयात करना पड़ रहा है, तो इसे किसानों में जागरूकता का अभाव ही कहा जाएगा।**

इस्तेमाल, उन्नत विधियों का प्रदर्शन, एकीकृत पोषक तत्त्व, कीट एवं रोग प्रबंधन और उन्नत कृषि यंत्रों को प्रचलन में लाकर प्रगतिशील खेती करने के लिए अनेक कृषि उपकरणों पर अलग-अलग राज्यों द्वारा कमोबेश पचास फीसद या उससे अधिक सबसिडी प्रदान की जाती है। इस योजना के तहत फसल के दौरान प्रशिक्षण के माध्यम से किसानों की क्षमता निर्माण समेत अन्य आवश्यक पहलुओं पर भी काम किया जाता है। इन सबसे इतर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद समेत अन्य अनुसंधान संस्थान सभी दलहनी फसलों पर अनवरत शोध एवं विकास कर रहे हैं। विगत दस वर्षों में दलहनी फसलों की व्यावसायिक खेती के निमित्त 343 उच्च उपज वाली विभिन्न किस्मों और हाइब्रिड किस्मों को आधिकारिक तौर पर मान्यता दी गई है। गुणवत्तापूर्ण दलहन के बीजों की उपलब्धता बढ़ाने के लिए 150 बीज केंद्रों की स्थापना की गई है।

दलहनी फसलों को बढ़ावा देने के सरकार के अनेक प्रयासों के बावजूद अगर दलहन का आयात बढ़ता जा रहा है, तो इसका मुख्य कारण किसानों का इन फसलों को अपनाने के लिए आगे न आना, जागरूकता के अभाव में नवाचारों को न अपनाना तथा जंगली जानवरों द्वारा फसलों को नष्ट कर देना है। एक और बड़ा कारण देश के अनेक हिस्सों में दलहनी फसलों का सिर्फ वर्षा आधारित खेती पर निर्भर होना है। हाल के वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण अनियमित वर्षा एवं सूखा आम बात हो गई है, इससे मूंग, उड़द, काला चना और अरहर दाल जैसी फसलें सिमटती जा रही हैं, जो कुल दलहनी फसलों का लगभग चालीस फीसद तक है।

एक सर्वे के मुताबिक, देश में दाल के लिए सालाना बोए जाने वाले ढाई करोड़ हेक्टेयर क्षेत्रफल में से लगभग पंद्रह फीसद ही सिंचित क्षेत्र है, जबकि इसके ठीक उलट गेहूं और गन्ना के लिए 90-95 फीसद तक सिंचित क्षेत्रफल है। प्रायः देखने में आता है कि अब अगर किसानों को सिंचाई की सुविधा भी मुहैया होती है, तो भी वे दलहनी फसलों से मुंह मोड़ रहे हैं। जबकि दलहनी फसलें अपने अद्वितीय गुणों के कारण अन्य सभी फसलों से बिल्कुल अलग हैं।

कृषि विशेषज्ञों के मुताबिक, अधिकांश दलहनी फसलें अपने पचहत्तर फीसद नाइट्रोजन की पूर्ति जड़ों से कर लेती हैं, इसकी वजह इनकी जड़ों में पाई जाने वाली गांठों में राइजोबियम नामक जीवाणु है। ये जीवाणु नाइट्रोजन को खेत में पहुंचा देते हैं। इससे एक ओर जहां दलहनी फसलों को इसकी पूर्ति हो जाती है, तो दूसरी ओर आगामी फसल के लिए भी मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन बच जाती है। इस तरह से किसानों को यूरिया के रूप में एक बड़े खर्च की बचत हो जाती है, जिससे लागत में कमी आती है। दलहनी फसलों के पौधे फैल कर बढ़ते हैं, जिससे ये मृदा को आवरण प्रदान करते हुए उसके कटाव को रोकते हैं। दलहनी फसलों के अवशेष को हरी खाद के रूप में प्रयोग कर मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इतने फायदे होने के बाद भी यदि देश को दालों का आयात करना पड़ रहा है, तो इसे किसानों में जागरूकता का अभाव ही कहा जाएगा।

किसानों को कृषि में हो रहे नवाचारों जैसे उन्नत सिंचाई विधियों, उन्नत प्रजातियों का विकास और उन्नत तकनीकों का प्रयोग करते हुए दलहनी फसलों के उत्पादन के लिए आगे आना चाहिए। किसान अपने उत्पादक संगठनों के माध्यम से बिचौलियों की भूमिका को कम कर फसल को सीधे बाजार में बेच सकता है। इससे उन्हें अच्छे दाम मिलेंगे और परिणामस्वरूप दलहनी फसलों का उत्पादन उनके लिए निश्चित रूप से मुनाफे का सौदा होगा।

प्रकृति की संजीवनी

अशोक कुमार

मानव सभ्यता का जन्म प्रकृति की गोद में उस काल में हुआ जब हमारे पूर्वज जंगल, नदी, पहाड़ आदि क्षेत्रों के समीप रहते थे। मूल रूप से वे प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर थे और कंद-मूल-फल सेवन करते हुए प्रकृति के नियमों के पालक भी थे। व्यक्ति अपने को प्रकृति का अनुयायी मानकर उसके हर मौसमी चक्र से अपने को आत्मसात करना अपनी निर्बाध नियति मानता था। प्राकृतिक रौद्र आज की अपेक्षा उस काल में काफी सीमित थे, क्योंकि लोग प्रकृति से संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता से भी जुड़े हुए थे। सभी मौसम अपने दायित्व संचालन में मानवीय आचरण के विभिन्न पहलुओं से तादात्म्य स्थापित किए हुए थे। अतिवृष्टि और अनावृष्टि की घटनाएं कम हुआ करती थीं, क्योंकि प्रकृति अपने संतान को दुख या विपदा देने की स्थिति से हरसंभव परहेज करती थी। यों कहें कि उस कालखंड में मानव और प्रकृति एक दूसरे के पूरक और सहयोगी माने जाते थे। क्रमशः कृषि के धरती पर आगमन ने मानव प्राणी को एक अलग परिधि से युक्त करते हुए उसकी भूख को कृषि संसाधनों के विविध आयाम से सामंजस्य बनाने में अहम भूमिका निभाई। कृषि के विभिन्न प्रकल्पों के चयन से अनेक किस्म के अनाजों के उत्पादन की विधा रची गई, जिसका मूल आधार प्रकृति प्रदत वर्षा के जल को स्वीकार किया गया।

धीरे-धीरे मानवीय सभ्यता के विकास की गति जब तेज हुई तो हम सबकी आवश्यकताओं में भी स्वाभाविक रूप में वृद्धि के द्वार खुलने लगे। धरती ने व्यक्ति को यह संदेश दिया कि तुम मुझे जो अंश हस्तगत करोगे, उसे मैं कई गुना की मात्रा में वापस कर दूंगी। यह प्रक्रिया आज भी शाश्वत है। एक मुट्ठी बीज रूपी अनाज की वापसी कई किलोग्राम के रूप में हमें धरती से होती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश को विकास की दौड़ में आगे बढ़ने की चुनौती और आवश्यकता थी। मानवीय और वित्तीय संसाधनों की सीमा में देश ने अनेक योजनाओं को शुरू करके विकास की पटकथा लिखना शुरू कर दिया, लेकिन चूक यह हुई कि प्रगति के लक्ष्य-बिंदु को शीघ्रता में स्पर्श करने की अदम्य प्यास ने हमें प्राकृतिक संसाधनों के असीमित भंडार में सेंध लगाने के दुस्साहस से भी लैस कर दिया। इस स्थिति में हम यह आकलन नहीं कर पाए कि विकास का अंतिम लक्ष्य क्या होगा, इसके योजना स्रोत कहीं हमारी प्राकृतिक संपदाओं में क्षरण तो नहीं ला रहे हैं!

अंतहीन विकास का घनघोर जुनून अभी भी हम पर सवार है कि हमारे कदम रुक नहीं पा रहे हैं। आर्थिक और तकनीकी रफ्तार यह मूल्यांकन करने से परहेज कर रहा है कि जिस दिशा में विकास के ध्वज लहराए जा रहे हैं, वे हमारे भविष्य एवं भावी संतति के लिए कितना उपयोगी हैं। वैज्ञानिक प्रयोग ने यह सिद्ध किया है कि हम जो जल पी रहे हैं, अनाज और अन्य खाद्यान्न सामग्री सेवन कर रहे हैं और जो आक्सीजन ले रहे हैं, उसकी बुनियादी क्षमता में तेजी से क्षरण हो रहा है, क्योंकि इसके मूल अस्तित्व के प्रति हमारी मानवीय और पारंपरिक संवेदनाएं एकपक्षीय तौर पर कठोर हो गई हैं। यही कारण है कि विगत कई माह से प्रकृति ने अपने स्वभाव में रूखेपन से यह चेतावनी जारी की है कि समय रहते हम चेत जाएं, अन्यथा उसके रौद्र में और अधिक भयावहता होगी।

हाल में हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और जम्मू-कश्मीर के पर्वतीय क्षेत्रों में जलचक्र के बदलाव के कारण बादल फटने के बाद हुई हृदयविदारक स्थितियां स्तब्ध करने वाली हैं। कभी ऐसे क्षेत्रों में मानवीय गतिविधियां न्यूनतम हुआ करती थीं, लेकिन विगत वर्षों में तथाकथित असंतुलित विकास कार्यों की कड़ी में हुई वृद्धि के कारण बड़ी संख्या में पेड़ों की कटाई, वनों में अग्नि प्रदाह और पर्यटन के लिए अविवेकपूर्ण निर्माण कार्यों ने स्थानीय पारिस्थितिकी को बुरी तरह अपनी चपेट में ले लिया है।

पहाड़ी क्षेत्र के नागरिकों की भी आधुनिक सुख-सुविधाएं और बुनियादी जरूरतें पूरी होनी चाहिए, लेकिन इन्हें मुहैया कराने के मूल्य पर इन क्षेत्रों की नाजुक पर्यावरणीय स्थितियों को भी ध्यान रखना आवश्यक है। विडंबना है कि पर्वतीय क्षेत्रों में वहां के नागरिकों की आवश्यकता से अधिक वहां जाने वाले पर्यटकों की सुविधा की प्राथमिकता हो गई है। नदी और पर्वतीय क्षेत्र को काटकर वहां आलीशान होटल, पनबिजली संयंत्रों, औद्योगिक इकाई आदि के निर्माण ने भारी संकट ला दिया है। वर्ष 2013 में केदारनाथ की घटना में कई हजार यात्री काल के गाल में समा गए थे और धराली की तरह कई गांव बह गए थे। चिंतनीय स्थिति यह है कि पूर्व की आपदा से हम कुछ सीखते नहीं, बल्कि आत्मघाती उदासीनता की चादर ओढ़ कर भाग्य भरोसे हो जाते हैं।

आपदाएं चाहे मानव निर्मित हो या प्राकृतिक, देश की प्रगति को काफी पीछे ले जाती हैं। बाढ़, भूकम्प, अकाल, चक्रवात, भूस्खलन, हिमस्खलन और कोरोना जैसी महामारी जन मानस को असीमित नुकसान पहुंचाते हुए राज्य की आधारभूत संरचनाओं को भी नष्ट कर देती हैं। प्रकृति ने मनुष्य के लिए मिट्टी, जल, हवा और वन संपदा मुहैया कराया है, लेकिन ये शृंखलाएं आज टूटती नजर आ रही हैं। जरूरत इस बात की है कि अभी भी हम प्रकृति के अस्तित्व को समझने और स्वीकारने की चेष्टा करें। अन्यथा जब प्रकृति नाराज होकर अपना रौद्र रूप धारण करेगी तो हम सबकी मुस्कान अंधेरे और विनाश में जाने को बाध्य होगी। प्रयास हो कि सुबह के भूले शाम को घर वापसी के तर्ज पर असामान्य होती जीवनशैली में सुधार करते हुए हम प्रकृति के विविध स्वरूपों को जीवन की संजीवनी बूटी की शक्ति के रूप में अपनाएं। स्वार्थ के सागर में भौतिक प्यास सदैव अधूरी ही रही है। सवाल बुनियादी है कि आखिर हम विनाश के दर्पण में विकास का प्रतिबिंब क्यों तलाशें!

दुनिया मेरे आगे

> **प्रकृति ने मनुष्य के लिए मिट्टी, जल, हवा और वन संपदा मुहैया कराई है, लेकिन ये शृंखलाएं आज टूटती नजर आ रही हैं। जरूरत इस बात की है कि अब भी हम प्रकृति के अस्तित्व को समझने और स्वीकारने की चेष्टा करें, अन्यथा जब प्रकृति नाराज होकर रौद्र रूप धारण करेगी तो हम सबकी मुस्कान अंधेरे और विनाश में जाने को बाध्य होगी।**

भावनाओं की उपेक्षा

जब पहलगाम की घटना हुई, तो भारत ने पाकिस्तान के साथ हर संबंध तोड़ लिया। यहां तक कि पाकिस्तान का पानी भी रोक दिया। कहा गया कि आतंकवाद और खेल एक साथ नहीं हो सकते। फिर भी भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड और सरकार ने ओलंपिक घोषणापत्र का हवाला देकर भारत-पाकिस्तान मैच को हरी झंडी दे दी। यह कदम करोड़ों भारतीयों की भावनाओं को नजरअंदाज करने जैसा रहा। अभी कुछ ही महीने बीते हैं जब आपरेशन सिंदूर की गूंज पूरे देश में थी। पहलगाम की घाटियों में खून बहा था। कई बहनों का सिंदूर उजड़ा, कई मां की गोद सूनी हुई, कई महिलाओं की आंखें पत्थर बन गईं। देशप्रेम केवल स्टेडियम की गूंजती भीड़ नहीं है। जिस मुल्क से दर्द की गोलियां आती हैं, उसी के साथ हम खेल खेलते हैं, यह कैसी विडंबना है? सियासत जानती है इस देश की जनता को भूलने की आदत है। वह किसी भी घटना को बहुत जल्दी भूल जाती है। लोगों का गुस्सा क्षणिक होता है। शायद यही वजह है कि सत्ता से जुड़े नेता जनता की संवेदना और भावनाओं का खयाल रखना बहुत जरूरी नहीं समझते।

- जयप्रकाश नवीन, नालंदा

हिंदी की अनदेखी

यह बहुत ही दुखद है कि हाल ही में गुजरे हिंदी दिवस के कार्यक्रम, भाषण और प्रतियोगिताओं तक ही सीमित रह गए हैं। अंग्रेजी के बढ़ते प्रचलन और वैश्विक जरूरत के कारण हिंदी का अस्तित्व खो सा गया है। विडंबना है कि देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा आज भी हिंदी से अनभिज्ञ है। बदलते परिवेश में वैश्विक नौकरियों की जरूरत और आधुनिकता के कारण अंग्रेजी का ज्ञान आवश्यक हो गया है। मगर यह दुर्भाग्य ही है कि स्कूली बच्चे हिंदी के अक्षर तक ठीक से लिखने में असमर्थ हैं। मात्राओं का ज्ञान न होना और हिंदी में गिनती न आना इस तरफ इशारा करता है कि अपनी भाषा के प्रति हम कितने लापरवाह हैं। जिंदगी में विकास के लिए दूसरी भाषाओं को अपनाना गलत नहीं है, पर अपनी भाषा न आना शर्म की बात है। माता-पिता को आधुनिकता के दिखावे से निकल बच्चों को हिंदी सिखाने पर जोर देना चाहिए। हिंदी सिर्फ देश की अहम भाषा नहीं, बल्कि हमारी धरोहर है।

- अभिलाषा गुप्ता, मोहाली

विपरीत असर

भले ही अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की ओर से थोपे गए दूसरे देशों की अर्थव्यवस्था पर असर पड़े, मगर इसका प्रभाव अमेरिकी उपभोक्ताओं की जेब पर भी पड़ने वाला है। रोजगार एवं अर्थव्यवस्था के आंकड़े बता रहे हैं कि अमेरिकी मुद्रास्फीति आसमान छूने जा रही है। पिछले दिनों जारी श्रम विभाग के प्रारंभिक आंकड़ों के अनुसार, अमेरिकी अर्थव्यवस्था ने मार्च तक के शुरुआती अनुमानों की तुलना में कम नौकरियां सृजित कीं। नियमित वार्षिक रपट से पता चला है कि बाइडेन प्रशासन के अंत और ट्रंप प्रशासन के शुरुआती महीनों में नौकरियों का बाजार पहले की तुलना में धीमी गति से बढ़ रहा था। पिछले हफ्ते वहां श्रम विभाग ने बताया कि नियोक्ताओं ने अगस्त में सिर्फ बाईस हजार नौकरियां जोड़ीं, जो उम्मीद से कहीं कम है। जबकि बेरोजगारी दर 4.2 से बढ़ कर 4.3 फीसद हो गई। इस तरह अमेरिका का शुल्क लगाने का दांव उल्टा पड़ता दिख रहा है।

- जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर

समाधान के रास्ते

प्रधानमंत्री की मणिपुर यात्रा में काफी देरी हुई। अब फिर वहां हिंसा भड़कने की खबर है। करीब ढाई वर्ष पहले मणिपुर जातीय हिंसा की आग में जल रहा था। राज्य सरकार जातीय हिंसा रोकने में विफल साबित हो चुकी थी। गृह मंत्री के दौरे के बावजूद मणिपुर में शांति स्थापित नहीं हो पाई थी। हिंसा में सैकड़ों लोगों की जान गई थी। आज भी हजारों लोग अपने ही राज्य में शरणार्थी जीवन जी रहे हैं। तब मणिपुर के नागरिक और विपक्षी दल प्रधानमंत्री के दौरे की मांग कर रहे थे। अंत में केंद्र सरकार ने हिंसा रोकने के लिए मणिपुर की सरकार को बर्खास्त किया और राष्ट्रपति शासन लगा दिया गया। मणिपुर में जातीय हिंसा रोकने के लिए स्थायी समाधान निकालना चाहिए, ताकि मैतेई और कुकी संप्रदाय के लोग शांति से रह सकें। प्रधानमंत्री ने राज्य में शांति और विकास सुनिश्चित करने पर बल दिया है।

- हिमांशु शेखर, गयाजी

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

फिर कुदरती कहर

हिमाचल, पंजाब, उत्तराखंड और जम्मू-कश्मीर में बादल फटने और भारी बाढ़ से बर्बादी के पुराने मंजर अभी हमारी स्मृतियों से ओझल भी नहीं हुए थे कि एक बार फिर सोमवार देर रात से लेकर मंगलवार सुबह तक हिमाचल व उत्तराखंड में कुदरत ने तबाही के नए दृश्य गढ़ दिए। उत्तराखंड की राजधानी देहरादून के सहस्रधारा और मालदेवता में बादल फटने, भारी बारिश और सौंग व तमसा नदी में आई अचानक बाढ़ ने जान-माल को काफी क्षति पहुंचाई है, तो हिमाचल में जगह-जगह से भू-स्खलन और बसों के नदी में बहने की सूचनाएं मिल रही हैं। देहरादून में सौंग नदी की लहर इतनी वेगवान हो गई कि वह सड़कों और पुलों को बहाती चली गई। देहरादून-मसूरी और देहरादून-हरिद्वार मार्ग इससे काफी प्रभावित हुए हैं। संतोष की बात है, जिला प्रशासन मुस्तैद रहा और पूरी रात लोगों को राहत पहुंचाने व खतरे की जगहों से सुरक्षित स्थान पर ले जाने का काम चलता रहा। चिंता की बात यह है कि अब तक ऊंचे पहाड़ी इलाकों में बादल फटने की घटनाएं घटती रही हैं, पर अब सहस्रधारा जैसे मैदानी क्षेत्रों को भी इसका प्रकोप झेलना पड़ रहा है।

निस्संदेह, इस नुकसान का सटीक आकलन मानसून के खत्म होने के बाद ही हो सकेगा, जब नदियों की धारा अपने पुराने स्वरूप में लौटेगी और बह गए मकानों-दुकानों और संस्थानों का सूक्ष्म लेखा-जोखा होगा। मगर इस वर्ष कुदरती कहर जिस तरह टूटा है, उससे न सिर्फ शासन-तंत्र को, बल्कि नागरिक समाज को भी अनिवार्य रूप से सबक लेने की जरूरत है। शासन-तंत्र को गंभीरता से सोचना पड़ेगा कि पर्वतीय इलाकों की विकास योजनाएं बनाते समय अब क्या-क्या सावधानियां अपनाई जाएं। खासकर ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभाव से ग्लेशियरों में हो रहे परिवर्तनों पर सुदीर्घ चिंतन की जरूरत है। पहाड़ी इलाकों में मानव गतिविधियों से वहां की पारिस्थितिकी प्रभावित होती है, इसे जानने के लिए अब किसी नजूमी की जरूरत नहीं है। इसलिए एक दीर्घकालिक नीति अपनाने की जरूरत है।

अब तक ऊंचे पहाड़ी इलाकों में बादल फटने की घटनाएं घटती रही हैं, मगर अब सहस्रधारा जैसे मैदानी क्षेत्रों को भी इसका प्रकोप झेलना पड़ रहा है।

हमारे नागरिक समाज को यह सीखने की जरूरत है कि मानसून के दौरान तफरीह के लिए ऐसे संवेदनशील इलाकों में न जाएं। भारतीय परंपरा में चतुर्मास की आध्यात्मिक अवधारणा यही संकेत करती है कि हमें कुदरत को चुनौती देने की हिमाकत नहीं करनी चाहिए। इन दिनों में भू-स्खलन और अतिवृष्टि की घटना पहले भी होती थी। लेकिन तब मानसून के दौरान मनुष्यों की आवाजाही थम जाती थी। मगर भौतिक तरक्की और आर्थिक उन्नति के साथ मानव समाज ने रोमांच का ऐसा मायाजाल रचा कि लोग जोखिम उठाने के प्रति आकर्षित होते गए। नदियों के बहाव क्षेत्र में जाकर बसने के अविवेकपूर्ण फैसले तक लोग प्रकृति से लोहा लेने को आमादा हो गए। अब कुदरत का रौद्र रूप सामने आ रहा है और हमसे बड़ी कीमत वसूलने लगा है। इसलिए आबादी के नियंत्रण के साथ-साथ सैलानियों का प्रबंधन भी बहुत जरूरी हो गया है। जिस तरह से पहाड़ी इलाकों में खास अवसरों पर लोगों का हुजूम उमड़ पड़ता है और उससे वहां की नागरिक व्यवस्थाएं चरमरा उठती हैं, वह भी एक संकेत है कि मौजूदा उपभोक्तावादी संस्कृति को विवेक की कितनी जरूरत है। उत्तर भारत में मानसून चंद दिनों का मेहमान है। तब तक मौसम विभाग की चेतावनियों को न सिर्फ स्थानीय प्रशासन को संजीदगी से लेना होगा, बल्कि लोगों को भी खतरे वाली जगहों पर जाने से बचना चाहिए। नहीं भूलना चाहिए कि विकसित देशों का तंत्र भी कुदरती कहर के आगे बौने पड़ जाते हैं।

हिन्दुस्तान Hindustan | **75 साल पहले** 17 सितंबर, 1950

अधिवेशन की तैयारियां

अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज पर इस समय फिर तेजी से काली घटाओं को उमड़ते देखकर संसार की शांतिप्रिय जनता के हृदय में भय व आशंका होने लगी है। इधर लेक सक्सेस में संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेम्बली के मंगलवार से होने वाले अधिवेशन के लिए तैयारियां हो रही हैं, तो दूसरी ओर अमरीका तथा पश्चिमी राष्ट्र यूरोप में 'संभावित आक्रमण' का मुकाबला करने की तैयारी कर रहे हैं और कोरिया में संयुक्त राष्ट्रीय सेनाओं ने बड़ा आक्रमण प्रारंभ कर दिया है। वैसे भी राजनीतिक पर्यवेक्षकों का कहना है कि रूस संयुक्त राष्ट्रीय जनरल असेम्बली में रचनात्मक योग देने के लिए नहीं, विध्वंसात्मक कार्रवाई के लिए आ रहा है। इस अधिवेशन में श्री विशिन्स्की तथा उनके साथियों के अतिरिक्त काजकस्तान तथा उजबेकिस्तान के विदेश मंत्री भी आ रहे हैं। न्यूयार्क में कहा जा रहा है कि अधिकांश लोगों को तो इस बात का पता भी नहीं कि सोवियत संघ के इन दो जनतंत्रों के अपने विदेश मंत्री भी हैं। इस बार एशियाई समस्याओं पर जनरल असेम्बली में बड़ा संघर्ष होगा, अतएव अपना पक्ष शक्तिशाली बनाने के लिए सोवियत सरकार मध्य एशिया के इन प्रतिनिधियों को ला रही है। कुछ जानकारों का यह भी कहना है कि यदि पख्तूनिस्तान का मामला असेम्बली में पेश हो गया, तो इन दो जनतंत्रों के प्रतिनिधि जो कि मुसलमान होंगे, रूस के प्रचार के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

चीन का प्रश्न : इस समय एशिया की सबसे बड़ी समस्या चीन की समस्या है। सुरक्षा परिषद में चीन के साम्यवादी प्रतिनिधि को किसी प्रकार लाने का रूसी प्रयत्न विफल हो गया। मंचूरिया पर बमबारी के चीनी अभियोग पर विचार करते समय पेकिंग सरकार के प्रतिनिधि को सुरक्षा परिषद में बुलाने के लिए सोवियत रूस ने जो प्रस्ताव रखा था, वह ठुकरा दिया गया। राजनीतिक क्षेत्रों में कहा जा रहा है कि सुरक्षा परिषद की कार्रवाई के प्रारंभ की भांति जनरल असेम्बली की बैठक के शुरू में भी श्री विशिन्स्की कुओमितांग प्रतिनिधि द्वारा चीन के प्रतिनिधित्व का विरोध करेंगे और पेकिंग सरकार के प्रतिनिधि को बुलाने को कहेंगे। वैसे भी पेकिंग सरकार श्री त्रिग्वेली के पास अपनी मांग भेज चुकी है। कठिनाई यह है कि अभी तक बहुत कम देशों ने चीन की साम्यवादी सरकार को मान्यता प्रदान की है।

नया नेपाल बनाने की नई चुनौती

क्या वहां शांति और सुरक्षा बनी रहेगी? स्थिरता आएगी? नई पीढ़ी द्वारा पेश एजेंडे और पुरानी पीढ़ी में लोकतंत्र के न बचे रहने की चिंता के बीच संतुलन बनाना बड़ी चुनौती है।

यहां स्कैन करें

पुष्परंजन | वरिष्ठ पत्रकार

नेपाल के राजनीतिक दलों ने लगभग मान लिया है कि चुनाव में जाना है। निर्वाचन आयोग किसी भी पार्टी को चुनाव में जाने से रोकेगा नहीं, ऐसा माना जा रहा है। इसलिए, बांग्लादेश के विद्रोह से नेपाल की तुलना बेमानी है। बांग्लादेश में 15 फरवरी, 2026 को आम चुनाव होना है। उसके अगले महीने 5 मार्च, 2026 को नेपाल में मतदान होगा। बांग्लादेश में सत्ता में आने को आतुर पार्टियां भारत के विरुद्ध जुबानी प्रक्षेपास्त्र दागती रहेंगी। बांग्लादेश व नेपाल की राजनीतिक परिस्थितियों में एक फर्क यह भी है कि प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली ने जन-विद्रोह के बाद अपने पद से इस्तीफा दिया था, जिसे राष्ट्रपति रामचंद्र पौडेल ने तत्काल स्वीकार कर लिया। शेख हसीना ने इस्तीफा दिया ही नहीं।

नेपाली कांग्रेस के महासचिव गगन थापा ने पार्टी के केंद्रीय कार्यालय के पुनर्निर्माण, और एकता की भावनात्मक अपील की है। काठमांडू के च्यासल स्थित सीपीएन-यूएमएल का केंद्रीय कार्यालय आगजनी से मलबे में तब्दील हो चुका है। 'एमाले' कार्यालय के आगे एक बैनर लगा है, 'हम फिर से उठेंगे, और भी मजबूत, और भी एकजुट।' माओवादी नेता प्रचंड ने भी पार्टी कार्यालय फिर से बनाने की घोषणा की है। नेकपा (माओवादी केंद्र) के वरिष्ठ उपाध्यक्ष नारायण काजी श्रेष्ठ ने कहा, 'चुनाव को लेकर माओवादियों में मतभेद नहीं है। राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद-61 के तहत चुनाव की घोषणा की है, इसलिए चुनाव में भाग न लेने का सवाल ही नहीं उठता। यही सही रास्ता है।'

मगर जमीनी स्तर पर हर जगह विश्वास का संकट है। आशंका के मिटने में समय लगेगा। जैसे, किसी ने भ्रष्टाचार करके घर बनाया है, या उस पर पुरानी सरकार का करीबी होने का आरोप है, तो उसे डर है कि कहीं उसका सब कुछ जलाकर राख न कर दिया जाए। नेपाल में लगभग सभी व्यापारिक घराने व विदेशी निवेश वाली कंपनियां आगजनी, तोड़फोड़ और लूटपाट का शिकार हुई हैं, इसलिए निजी क्षेत्र में निवेश के लिए माहौल अनुकूल नहीं है। अनुमान है कि निजी क्षेत्र को 200 अरब डॉलर से ज्यादा का नुकसान हुआ है। निजी क्षेत्र का मनोबल इस डर से निचले स्तर पर पहुंच गया है।

क्या नेपाल में शांति और सुरक्षा बनी रहेगी? स्थिरता आएगी? क्या यह देश सही रास्ते पर चलेगा या वहां फिर संघर्ष छिड़ जाएगा? नई पीढ़ी द्वारा पेश किए गए एजेंडे और पुरानी पीढ़ी में लोकतंत्र के न बचे रहने की चिंता के बीच संतुलन बनाकर यह देश कैसे आगे बढ़ेगा? यह सवाल सबके मन में है। विश्वास बहाली इस समय सुशीला कार्की और उनके सहयोगी मंत्रियों के लिए बड़ी चुनौती है। नेपाली कांग्रेस के महासचिव गगन थापा ने कहा, 'भूकंप से भी इतना बड़ा नुकसान नहीं हुआ था। आने वाले दिनों में राजनीतिक हिसाब-किताब होगा और दोषियों को सजा मिलेगी, लेकिन अभी पहली प्राथमिकता राष्ट्र का पुनर्निर्माण है।'

नेपाल लगभग 26 खरब, 83 अरब रुपये विदेशी ऋण का कर्जदार है। इसके चालू खाता में 78 अरब, 14 करोड़ रुपये हैं और सामने है पुनर्निर्माण व चुनाव की चुनौती। अब यह किससे लेगा पैसा? साल 2022 के संसदीय चुनाव में छह अरब 83 करोड़ रुपये का खर्च आया था। तब उद्योग-व्यापार खड़े थे, अब वे बर्बाद हैं। वे राजनीतिक पार्टियों को चुनाव के लिए कहां से पैसे देंगे? 27 नवंबर, 2001 को बॉन सम्मेलन में अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण के लिए विकसित देशों ने पैसे दिए थे। क्या नेपाल अपने पुनर्निर्माण और चुनाव के लिए 'अंतरराष्ट्रीय दानदाता सम्मेलन' का आयोजन करेगा? साल 2022 के चुनाव में भारत ने 200 गाड़ियां नेपाल भेजी थीं। चीन, बीआरआई प्रोजेक्ट को गति नहीं देने से खुंदक खाया हुआ था, चुनांचे उसने 2022 के चुनाव में कोई मदद नहीं भेजी। यदि इस बार चुनाव के वास्ते बहुराष्ट्रीय सहायता नहीं मिली, तो नेपाल के लिए मुश्किल स्थिति होगी। भारत सरकार को इस पर गौर करना चाहिए।

इसी तरह, सन् 1989 के बाद से उच्च पदों पर आसीन लोगों की संपत्ति की जांच होनी चाहिए। भ्रष्टाचार और आय से अधिक संपत्ति की जांच के एजेंडे को पहले ही देशव्यापी मान्यता मिल चुकी है। प्रमुख राजनीतिक दलों के भीतर भी एक आवाज उठ रही है कि जांच के लिए एक आयोग का गठन होना चाहिए। मगर यह आयोग राजा द्वारा पहले बनाए गए 'कंगारू आयोग' जैसा न हो, बल्कि निष्पक्ष हो। संयुक्त राष्ट्र ने ग्वाटेमाला में इसी उद्देश्य से एक आयोग का गठन किया था। आयोग के माध्यम से मानवाधिकार और भ्रष्टाचार की जांच की गई थी।

जिन लोगों ने जेन-जी आंदोलन में घुसपैठ करके आगजनी, तोड़-फोड़, चोरी और लूटपाट की, उनकी जांच कराने और रिपोर्ट आने में देर नहीं होनी चाहिए। सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए उनके विरुद्ध त्वरित कार्रवाई की जानी चाहिए, अन्यथा नेपाली समाज में यह धारणा प्रबल हो जाएगी कि कुछ भी हो सकता है और कानून, न्याय व सुरक्षा की गारंटी बेमानी हो जाएगी। अफ्रीका के कई संघर्षरत देशों की तरह नेपाल में भी हिंसा की संस्कृति जड़ें जमा लेगी। नेपाल अपराधियों का अभयारण्य न बने, यह सुनिश्चित करना सुशीला कार्की सरकार का काम है।

नेपाल की पूर्व प्रधान न्यायाधीश सुशीला कार्की का अंतरिम प्रधानमंत्री के रूप में राजनीतिक कायांतरण कैसे होता है, इस पर पूरी दुनिया की नजर है। सुशीला कार्की प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की प्रशंसक हैं, इसका मतलब यह कतई नहीं कि वह नई दिल्ली के बताए मार्ग पर चल पड़ेंगी। प्रशंसक और समर्थक का अंतर समझना नेपाल के संदर्भ में ज्यादा जरूरी है। अभी जो तीन मंत्री जुड़े हैं, उनमें से वित्त और ऊर्जा मंत्री जेन-जी आंदोलन से नहीं हैं। रामेश्वर खनाल ने वित्त सचिव रहते हुए अपनी अच्छी छवि बनाई थी, तो लोड शेडिंग से निजात दिलाने वाले नौकरशाह कुलमान घीसिंग ऊर्जा मंत्री की भूमिका में हैं। एक राजनेता के रूप में सफल होना भी कुलमान के लिए चुनौती होगी। गृह मंत्री की भूमिका में आ चुके अधिवक्ता ओमप्रकाश अर्याल, काठमांडू के मेयर बालेंद्र शाह के कानूनी सलाहकार रहे हैं। अर्थात, ओमप्रकाश अर्याल भी राजनीति के नेपथ्य में रहे हैं।

क्या नेपाल में नई पार्टी का अभ्युदय होना है? निश्चय ही यह नई पार्टी युवाओं की होगी, और दक्षिण-वाम विचारधारा से अलग होगी। इस नई पार्टी का विजन, नेतृत्व और किन वैचारिक शक्तियों से उसे पैसा व समर्थन मिलना है, यह सारा कुछ भविष्य के गर्भ में है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

अपनी बोलियों को बचाए बिना नहीं निखरेगी हिंदी

यहां स्कैन करें

पंकज चतुर्वेदी | वरिष्ठ पत्रकार

सितंबर का दूसरा पखवाड़ा हिंदी की चिंता का होता है। हिंदी लोकभाषा है और उसको राजभाषा कैसे बनाया जाए, इस दौड़ में देश की बोलियां लुप्त हो रही हैं। हिंदी में इन बोलियों का समृद्ध शब्द-संस्कार शामिल होने के बजाय यूरोपीय भाषाओं के शब्द जगह बनाते जा रहे हैं।

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुई जनगणना में महज एक प्रतिशत लोग साक्षर पाए गए थे, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि उससे पहले भाषा, साहित्य, ज्ञान-विज्ञान, आयुर्वेद, ज्योतिष आदि का ज्ञान हमारे पास नहीं था। वह था देश की बोलियों में, संस्कृत में, उससे भी पहले प्राकृत या पालि में, जिसे सीमित लोग समझते थे। फिर अमीर खुसरो के समय आई हिंदी। हिंदी साहित्य का भक्ति काल 1375 ई से 1700 ई तक माना जाता है। यह हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ युग है। समस्त हिंदी, उसकी लोक बोलियों में साहित्य के श्रेष्ठ कवि और उत्तम रचनाएं इस युग में प्राप्त होती हैं।

आज जिस हिंदी की स्थापना के लिए पूरे देश में पखवाड़ा मनाया जाता है, उसकी सबसे बड़ी दुविधा है मानक हिंदी, यानी संस्कृतनिष्ठ हिंदी। सनद रहे, संस्कृत का स्वभाव शास्त्रीय है और दरबारी, जबकि हिंदी का स्वभाव लोक है और विद्रोही। ऐसा नहीं है कि आम लोगों की हिंदी में संस्कृत से परहेज है। उसमें संस्कृत से यथावत लिए गए तत्सम शब्द भी हैं, तो अपभ्रंश हुए तद्भव शब्द भी, जैसे अग्नि से आग, उष्ट से ऊंट आदि। इसमें देशज शब्द भी रहे हैं। आज भी जब प्रतिरोध की बात होगी, लोक बोली और उससे जुड़ी हिंदी ही काम आएगी। कई बार लगता है कि सरकारी हिंदी का प्रयास भी वही है, जो अंग्रेजों का था। विशुद्ध हिंदी बहुत ही कम माध्यमों में है।

हिंदी का मौजूदा रूप बुंदेली, ब्रज, राजस्थानी आदि बोलियों से उभरा है और इसकी श्री-वृद्धि के लिए इन बोलियों को ही पालकी संभालनी होगी।

यह चिंता का विषय है कि समाचार पत्रों ने अपने स्थानीय संस्करण निकालने तो शुरू किए, लेकिन उनसे स्थानीय भाषा गायब हो गई। जैसे- कुछ दशक पहले कानपुर के अखबारों में गुम्मा व चुटैल जैसे शब्द होते थे, बिहार में ट्रेन-बस से लेकर जहाज तक के प्रारंभ होने के समय को 'खुलने' का समय कहा जाता था। महाराष्ट्र के अखबारों में जाहिरा, माहेती जैसे शब्द होते थे। पंजाब-हरियाणा-हिमाचल के हिंदी मीडिया में स्थानीयता का पुट पर्याप्त होता था। अब सभी जगह एक जैसे शब्द आ रहे हैं। लगता है, हिंदी की भाषा-समृद्धि में व्यवधान सा पैदा हो गया है। तिस पर सरकारी महकमे हिंदी के मानक रूप को तैयार करने में संस्कृतनिष्ठ हिंदी ला रहे हैं। असल में, वे जिसे मानक हिंदी कहते हैं, वह सीसे के लेटर प्रेस की हिंदी थी, जिसमें कई मात्राओं, आधे शब्दों के फॉन्ट नहीं होते थे। आज कंप्यूटर की प्रकाशन दुनिया में लेड--की प्रकाशन- है। प्रेस के फॉन्ट की बात करने वाले असल में हिंदी को थाम रहे हैं।

हिंदी में बोली और भाषा का द्वंद्व शिक्षा के प्रसार और स्कूल जाने वाले बच्चों की बढ़ती संख्या व रोजगार के लिए होने वाले पलायन ने बढ़ाया है। बच्चों के साथ दिक्कतों का दौर स्कूल जाते ही शुरू हो जाता है। घर पर वह सुनता है मालवी, निमाड़ी, मिजो, मिशिंग, खासी, गढ़वाली, राजस्थानी, बुंदेली या भीली, गोंडी, धुरबी या ऐसी ही 'अपनी' बोली-भाषा। मगर स्कूल में किताबें खड़ी हिंदी या अंग्रेजी या राज्य की भाषा में होती हैं, और उसे तभी बता दिया जाता है कि यदि असल में पढ़ाई कर नौकरी पानी है, तो अंग्रेजी ही एकमात्र जरिया है। बच्चा इसी दुविधा में बचपन बिता देता है कि 'पहले अध्यापक' मां-पिता को सही कहूं या स्कूल की पुस्तकों की भाषा को, जो उसे 'सभ्य' बनाने का वायदा करती है। जाहिर है, इस उलझन में पले-बढ़े लोग जिस दफ्तर में जाएंगे, वहां भी राजभाषा व लोकभाषा की हिंदी में उलझे रहेंगे।

असल में, कोई भी भाषा 'बहता पानी निर्मला' होती है, उसमें समय के साथ शब्दों का आना-जाना, लेन-देन, नए प्रयोग आदि लगे रहते हैं। यदि हिंदी को वास्तव में एक जीवंत भाषा बनाकर रखना है, तो शब्दों का यह लेन-देन पहले अपनी बोलियों व फिर भाषाओं से हो, वरना हिंदी नारे, सम्मेलन, बैनर, उत्सव की भाषा ही बनी रहेगी। जान लें, हिंदी का मौजूदा मानक रूप बुंदेली, ब्रज, राजस्थानी आदि बोलियों से उभरा है और इसकी श्री-वृद्धि के लिए इन बोलियों को ही हिंदी की पालकी संभालनी होगी।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

अनंत को पहचानना सीखें

आपने कभी इस बात पर गौर किया है कि किसी को कैसे पता चलता है कि उसे सुख मिल रहा है? आनंद कहीं कोई भ्रम तो नहीं है?

मनुष्य का सबसे सूक्ष्म करीबी उसका मन है। हम हर क्षण इससे जुड़े रहते हैं। मन का आधार है वे विचार और भावनाएं, जिनको हम स्वीकारते हैं, त्यागते हैं या जिन पर चिंतन करते हैं। बाहरी वस्तुएं चाहे भौतिक हों, पर उनका वास्तविक प्रभाव हमारे मन पर ही पड़ता है। यही कारण है कि आनंद भी मन में ही अनुभव होता है।

मन जब किसी वस्तु से सुख पाता है, तो थोड़े समय बाद ही वह उससे हटकर दूसरी वस्तु की ओर आकर्षित हो जाता है। संसार का यही नियम है। जिसका आरंभ है, उसका अंत निश्चित है। अतः कोई भी वस्तु स्थायी आनंद नहीं दे सकती। एक समय बाद मृत्यु उसे छीन लेती है। मनुष्य इस सत्य को समझ नहीं पाता। लोग धन, पुत्र, प्रसिद्धि या किसी भौतिक सुख को जीवन का मुख्य उद्देश्य मानकर उसमें डूब जाते हैं। कोई धन के विचार में ही अपना जीवन खपा देता है, तो कोई यश-कामना में और कोई-कोई संतान को ही सब कुछ मान लेता है।

परंतु मन इन वस्तुओं से स्थायी आनंद नहीं पा सकता। इसलिए यदि कोई वस्तु लंबे समय तक आनंद नहीं दे पाती या अत्यधिक आसक्ति के बाद खो जाती है, तो वह कष्ट और पीड़ा का कारण बनती है। जैसे किसी अप्रिय व्यक्ति से मिलने के बाद मन तुरंत छुटकारा पाना चाहता है। यही दुख है। इसीलिए चाहे कोई वस्तु सुखद लगे या दुखदायी- उसकी सीमा उसे अस्थायी बना देती है। अंततः वह अलग हो ही जाएगी।

मनुष्य स्वभाव से सुरक्षित आधार की खोज में रहता है। क्या कोई रेत पर अपना घर बनाता है? नहीं। फिर स्थायी आधार कहां है? केवल ब्रह्म ही अनादि है, अनंत है। इसलिए वही मन का विषय और जीवन का आधार हो सकता है। अपने पुत्र से कौन प्रेम नहीं करता? पर दुर्भाग्यवश वह हमसे छिन जाए, तो मन टूट जाता है। यह सीमितता है। किंतु यदि हम अपने पुत्र को ब्रह्म की अभिव्यक्ति मानें, तो खोने का डर कभी नहीं रहेगा। क्योंकि ब्रह्म कभी खो नहीं सकता। यदि पिता-माता, भाई-बहन, सगे-संबंधी, बंधु-मित्र, पृथ्वी, वृक्ष या किसी भी अस्तित्व को ब्रह्म का स्वरूप मानकर देखें, तो मन किसी भी सीमितता से बंधा नहीं रहेगा। तब व्यक्ति प्रत्येक के साथ उचित व्यवहार कर सकेगा।

संसार के हर रिश्ते, प्रत्येक वस्तु में अनंत का दर्शन करने से आकर्षण और भय, दोनों समाप्त हो जाते हैं। तब मन न तो आसक्ति में फंसता है और न वियोग से टूटता है।

संसार के हर रिश्ते, प्रत्येक वस्तु में अनंत का दर्शन करने से आकर्षण और भय, दोनों समाप्त हो जाते हैं। तब मन न तो आसक्ति में फंसता है और न वियोग से टूटता है। यह दृष्टि जीवन को गहन शांति और आनंद देती है। यह आनंद अनंत हो जाता है। यही अध्यात्म का सार है, अनंत को पहचानना।

श्री श्री आनंदमूर्ति

गैरी कॉस्परोव | पूर्व चैंपियन, शतरंज

रूस, उत्तर कोरिया, ईरान और चीन जहां यूरोप पर हमला करने के लिए हथियारों का उत्पादन और अपने सैनिकों की संख्या बढ़ा रहे हैं, तो वहीं यूरोपीय देश प्रेस विज्ञप्तियों, बैठकों और भड़काऊ भाषणों का उत्पादन बढ़ाने में जुटे हैं।

महात्मा की छवि बिगाड़ने वाली फिल्में

क्या जहरबुझी प्रोपेगेंडा फिल्में बनाकर उनके फ्लॉप होने पर रोने वाले हमें बताएंगे कि महात्मा गांधी कौन और क्या थे? सच यही है कि जब पूरे देश में नफरती लोग, चाहे वे मुसलमान या हिंदू थे, वहशी बन चुके थे, तब उन्हें समझाने और शांत करने के लिए सिर्फ एक व्यक्ति था, एकदम अकेला और बूढ़ा, जो नोआखाली में घूम रहा था। वह वृद्ध अकेले वहशी भीड़ को समझा रहा था। वह उससे पूछ रहा था कि जिन इंसानों के लिए हमने आजादी चाही, जिनके लिए सब त्याग दिया, जिनकी स्वतंत्रता हमारे जीवन का अंतिम लक्ष्य थी, वे पाशविकता के गुलाम कैसे हो गए? नोआखाली से कलकत्ता, कलकत्ता से बिहार, बिहार से दिल्ली, दिल्ली से पंजाब, पंजाब से दिल्ली... वह महात्मा अकेला बदहवास दौड़-भाग कर रहा था। जो लोग इंसानों का खून बहाने में सबसे आगे थे, वे महात्मा के ही खून के प्यासे हो गए थे। छह हमलों के बाद अंततः उन्हें सफलता भी मिल गई। हालांकि, एक निहत्थे बूढ़े को मारने के लिए उन्हें भगीरथ प्रयास करना पड़ा। महात्मा का अशक्त और अकेला शरीर मर गया। भारत से लेकर पाकिस्तान तक में स्तब्धता छा गई। लेकिन असली चमत्कार उसके बाद हुआ। वह महात्मा अमर हो गया।

टैगोर का वह महात्मा आज पूरी दुनिया का महात्मा है। सुभाषचंद्र बोस का वह राष्ट्रपिता आज देश का राष्ट्रपिता है। जो अपने आखिरी दिनों में इस दुनिया की हिंसा से निराश, बदहवास, विक्षिप्त और अकेला था, मौत के बाद पूरी दुनिया का महात्मा हो गया। जब भारत के लोग स्वशासन और सत्ता का स्वागत कर रहे थे, उस महात्मा ने अकेलापन चुना था और नोआखाली से दिल्ली तक भागकर मनुष्यता को बचाया था। आज हम उस आत्मा से, उसकी तपस्या से हर दिन सीखते हैं और अपनी जिंदगी को छोटा महसूस करते हैं। वह हमारा प्यारा बापू है, हमारे भारत का विश्वपुरुष महात्मा गांधी।

आज प्रोपेगेंडा फिल्मकार अपनी फिल्मों में अहिंसा और गांधी को अपमानित करने का प्रयास कर रहे हैं। नफरती गैंग का दुख है कि महात्मा गांधी ने हिंदुओं को उकसाकर मुसलमानों से लड़ाया क्यों नहीं? इनको मालूम ही नहीं है कि नफरत का चरमसुख महात्मा गांधी के यहां नहीं, गोडसे के यहां मिलता है। आज जो गांधी पर और उनके मूल्यों पर हमला कर रहे हैं, वे एक दिन फिर से हार जाएंगे। गांधी मानवीय मूल्यों का नाम है, मानवता जब तक जिंदा रहेगी, गांधी जिंदा रहेंगे। हत्याओं के आकांक्षियों को यह दुनिया अब भी पशुओं की श्रेणी में रखती है, आगे भी रखेगी। गांधी मानवता के महानायक हैं, वह फिर जीत जाएंगे।

कृष्णकांत, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

गांधी और फिल्म

गांधी भी इंसान, उन्हें देवता मत बनाइए

'भारत का विभाजन अभी थमा नहीं, यह निरंतर जारी है।' 'दस फीसदी जनसंख्या होने पर वे मताधिकार, बीस पर शासन में भागीदारी और तीस पर स्वतंत्र राज्य की मांग करते हैं।' 'हिंदू और मुस्लिम कभी एक नहीं हो सकते, उनकी मजहबी मान्यताएं ऐसी हैं, जो उन्हें अलग करती हैं।' 'काफिरों को जीने का हक नहीं है, यह अल्लाह ताला का फरमान है।' - ये कुछ ऐसे संवाद और ऐसी ही तकरीरें हैं, जो *द बंगाल फाइल्स* फिल्म में सुनाई देती हैं। निस्संदेह, इसे यदि आप एक फिल्म के रूप में देखेंगे, तो विवेक अग्निहोत्री की पूर्व की फिल्मों के सामने यह फीकी प्रस्तुति लगती है। लगभग तीन घंटे बीस मिनट की यह फिल्म कहीं-कहीं उबाऊ भी है। मगर यदि इसे आप भारत के विभाजन की पूर्वपीठिका के रूप में देखेंगे, तो यह काली, नग्न और घृणित सच्चाइयों का पुलिंदा है। फिल्म पूरी शिद्दत से यह एहसास करा देती है कि भारत का विभाजन अभी भी खत्म नहीं हुआ है, यह जारी है। और, जिसे हम राष्ट्रपिता के नाम से पूजते हैं, उनकी असलियत क्या है?

फिल्म मुख्यतः उस काले और वीभत्स इतिहास को दर्शकों के सामने लाती है, जिससे आज की युवा पीढ़ी और बहुतेरे बुजुर्ग अनभिज्ञ हैं। यह भारत के विभाजन को उद्यत जिन्ना के 'डाइरेक्ट ऐक्शन' के आह्वान पर बंगाल और तदनंतर नोआखाली में इस्लाम के नाम पर हिंदुओं के भयावह नरसंहार से लेकर भारत के विभाजन तक के काले और रक्तरंजित इतिहास को सामने लाती है। हमारे शीर्ष नेताओं की यह तटस्थता कहें या लाचारी कि वे तेजी से घटते इन घटनाक्रमों पर अंकुश नहीं लगाते। गांधी की मुस्लिम पक्षधरता और नेहरू का भारत के विभाजन की ओर झुकाव का स्पष्ट संकेत यह फिल्म करती है। यह फिल्म बताती है कि हिंदू बाहुल्य भारत को चेत जाना चाहिए और सबक सीखना चाहिए, अन्यथा इतिहास का दोहराव हो सकता है। इस फिल्म में इस्लामी लीडर आह्वान भी करते हैं कि विभाजन रुका नहीं है, बल्कि आज भी जारी है। इसमें गांधी की आलोचना का भी तथ्यात्मक संदर्भ दिखता है। गांधी एक जगह कहते हैं कि हिंदू महिलाओं को बलात्कार से बचना है, तो जीभ दांत से दबा, सांस रोककर प्राण त्याग कर देना चाहिए। उन्हें बंगाल और नोआखाली के नरसंहार से भी कुछ खास लेना-देना नहीं।

कुछ लोग कह रहे हैं कि महात्मा गांधी की आलोचना नहीं की जानी चाहिए। आखिर क्यों? वह भी हाड़-मांस का एक पुतला थे, जिनमें कुछ कमजोरी हो सकती है। हमें इस तर्क को भी खुले दिल से स्वीकार करना चाहिए।

अरविंद मिश्रा, टिप्पणीकार